Regd. No. 58414/94

स्वामी रामानन्द जी द्वारा संचालित

हमारी साधना

त्रैमासिक

वर्ष 29 • अंक 2 • अप्रैल-जून 2022

मूल्य रु. 25/-

साधना के रास्ते पर चलते हुए हमें अपने संस्कारों को क्षीण करना होता है। पाप संस्कार क्षीण होने में दुखदायी होते हैं, अतः कष्ट प्रतीत होता है, परन्तु प्रभु सहन करने का बल और धैर्य भी तो देते हैं। भोगे बिना तो कर्मों का क्षय होता ही नहीं।

(पत्र-पीयूष पत्र संख्या 248)

करुणामयी सुमित्रा माँ

हमारी साधना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।
न त्वहं कामये राज्यम्, न स्वर्गम् न पुनर्भवम्।
कामये दुःख तप्तानाम्, प्राणिनामार्ति नाशनम्।।

वर्ष : 29 अप्रैल-जून 2022 अंक : 2

भजन

1. गुरु के पावन पद पदम बंदहुं सहित सनेह।
   कबहुँ न भूलउँ एक छन हरि यह मांगे देहु॥
2. बंदहुं गुरु के सुचि चरन पुनि-पुनि सीस नवाय।
   सेवहुं सादर राखि रुचि हिय में लेहुं बसाय॥
3. हिय बसावहुं गुरु चरन पावन प्रीति लगाय।
   तन मन धन अरपन करहुं तऊ न हियो अघाय॥
4. श्री गुरुदेव दयालु के पावन पद जलजात।
   मम मन मन्दिर में सदा बसे रहैं दिन रात॥
5. जीवन में गुरुदेव के हैं अनगिनत उपकार।
   बरनत हौं हार्‌यों हिये पै नहिं पायो पार॥
6. मो सम अधम अजोग के अगनित दोज़ भुलाय।
   अनुपम पावन प्यार करि हिय सों लयो लगाय॥
7. सुमिरि सुमिरि गुरु की कृपा मन मेरो पछिताय।
   कछु प्रतिकार न करि सक्यों यह दुख कहाँ समाय॥
8. सदा प्रेम सों लीन रहु गुरु सेवा में तात।
   बचन मान श्रद्धा सहित उर धरु पद जलजात॥

भजन संख्या 2 - स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'

प्रकाशक
साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम,
संन्यास रोड, कनखल,
हरिद्वार-249408
फोन: 01334-240058
मोबाइल: 08273494285

सम्पादिका
श्रीमती रमन सेखड़ी
995, शिवाजी स्ट्रीट,
आर्य समाज रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
मोबाइल: 09711499298

उप-सम्पादक
श्री रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'
1018, महागुन मैंशन-1,
इन्दिरापुरम,
गाजियाबाद-201014
ई-मेल: rcgupta1018@gmail.com
मोबाइल: 09818385001

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	रचयिता	पृ.सं.
1.	चित्र – करुणामयी सुमित्रा माँ		2
2.	भजन	स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'	3
3.	सम्पादकीय		5
4.	श्रद्धांजलि पूज्य गुरुदेव के चरणों में 15 अप्रैल 2022		6-7
5.	श्री गुरुदेव की पुण्य स्मृति में	- साधिका विद्यावती जी	7
6.	गीता विमर्श – श्रीमद्भगवद्गीता पंचमोऽध्याय (गतांक से आगे) – स्वामी रामानन्द जी		8-11
7.	पत्र-पीयूष		12-13
8.	Letters to Seekers — Letter Nos. 3-4		14-15
9.	पाप होने कैसे बन्द हों?	- श्रद्धेय श्री हनुमान प्रसाद जी पोद्दार	16-18
10.	क्या खोया क्या पाया	- रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'	19-20
11.	स्वामी सुबोधानन्द जी (प्रमुख आचार्य, सांदीपनी हिमालय) का वक्तव्य		20
12.	ईश्वर, आत्मा और प्रकृति	– उर्मिला सहगल	21-22
13.	भजन		22
14.	निर्वाण दिवस साधना शिविर का विवरण और प्रवचन सार		23-35
15.	साधना परिवार की नई कार्यकारिणी का चुनाव		36
	– चुनाव अधिकारी की रिपोर्ट		36
	– पदाधिकारियों का चयन		36
16.	शोक समाचार		37
17.	जरा ध्यान दीजिये		37
18.	दानदाताओं की सूची		38-39
19.	श्री गुरु पूर्णिमा साधना शिविर - सूचना		40
20.	श्री मद्भागवत कथा (ज्ञान यज्ञ) - सूचना		40
21.	श्री रामायणपाठ - सूचना		40
22.	बाल-साधना-शिविर - सूचना		41
23.	श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य		42
24.	चित्र - गुरुदेव निर्वाण दिवस शिविर		43-44

Printed and Published by Shri Dinesh Bahl for and on behalf of Swami Ramanand Sadhna Pariwar, Sadhna Dham, Sanyasa Road, KANKHAL-Haridwar (Uttarakhand) and printed at Rakmo Press Pvt. Ltd., C-59, Okhla Industrial Area Phase-I, New Delhi-110020.

सम्पादकीय

सभी साधक भाई-बहनों को सप्रेम राम राम!

गुरुदेव महाराज के आशीर्वाद से कोरोना महामारी से उबर कर साधना परिवार गत अप्रैल माह में निर्वाण-दिवस शिविर का आयोजन साधना-धाम हरिद्वार में विधिवत् करने में सफल रहा। शिविर का विवरण विस्तारपूर्वक पत्रिका के इस अंक में दिया जा रहा है। इसी शिविर के दौरान दिनांक 20 अप्रैल 2022 को धाम के प्रांगण में आहूत आम सभा में सामान्य निकाय (जनरल बॉडी) द्वारा नई कार्यकारिणी का चुनाव किया गया जिसमें चुनाव अधिकारी द्वारा 21 सदस्यीय कार्यकारिणी घोषित की गई। अगले दिन नई कार्यकारिणी की बैठक में नए पदाधिकारियों का चुनाव किया गया जिसमें बीसलपुर निवासी जाने-माने सक्रिय सेवक श्री विष्णु कुमार गोयल जी को सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुना गया। अन्य पदाधिकारी भी सर्वसम्मति से चुने गये। इसका विस्तृत विवरण भी पाठकों को पत्रिका के इस अंक में मिलेगा।

हर्ष का विषय है कि गत 12 मई को वरिष्ठ साधक श्री हरपाल सिंह राजपूत जी ने दिगोली धाम जाकर अपनी स्वर्गीय धर्मपत्नी श्रीमती कुसुम की स्मृति में भण्डारे का आयोजन किया जिसमें नव-निर्वाचित अध्यक्ष महोदय के साथ पाँच अन्य साधकों ने भी उनका सहयोग किया और तीन दिन वहाँ रह कर स्थानीय लोगों को साधना परिवार से जुड़ने के लिये प्रेरित किया। भण्डारे में लगभग 150 व्यक्तियों को भोजन कराया गया जिसमें 100 विद्यार्थी थे।

प्रस्तुत पत्रिका में गुरुदेव की गीता विमर्श के अंश के साथ-साथ पत्रों के माध्यम से हिन्दी व अंग्रेजी में साधकों को दिया गया मार्गदर्शन भी उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त 'कल्याण' पत्रिका के सम्पादक रह चुके परम आदरणीय श्रद्धेय श्री हनुमान प्रसाद जी पोद्दार का लेख तथा पुरानी पत्रिका से चुने हुए लेख भी सम्मिलित किये गये हैं।

त्रुटियों के लिये सम्पादक मण्डल क्षमा प्रार्थी है। साधकों के सुझाव तथा लेख, कवितायें व भजन आगामी पत्रिका में प्रकाशन हेतु आमन्त्रित हैं।

आगामी अंक के लिये साधकगण कृपया अपने भजन, कवितायें व लेख इत्यादि सम्पादक अथवा उप-सम्पादक को ई-मेल या वाट्सएप के माध्यम से प्रेषित करें।

पत्रिका में सुधार के लिये पाठकों के सुझावों का सदा ही स्वागत है।

श्रद्धांजलि पूज्य गुरुदेव के चरणों में 15 अप्रैल 2022

श्रीमती सुशीला जायसवाल जी

हे दिव्य ज्योति हे परम धाम
चरणों में कोटिक है प्रणाम
तुमसे ही अवनि और अंबर
तुम ही हो जीवन के आधार
जड़ के कण-कण में तुम ही हो
वृक्षन के पातन में तुम हो
पक्षिन की कूँ-कूँ में तुम हो
मानस के हो तुम हृदय हार
आलोकित करते सूर्य लोक को
तारा चंद्र गगन मंडल
सरिता रूप से कलरव करते
वायु रूप जीवन संचार
संहार करो तुम रुद्र रूप से
ब्रह्मा रूप से करें सृजन
पालन करते विष्णु रूप से
भरते रंग अनेक प्रकार
आदि अनादि नहीं प्रभु तेरा
शाश्वत होकर करें बसेरा
विकसित होते प्रति कण प्रति क्षण
पाकर तेज अखण्ड अपार
निज जन को आनन्दित करके
जीवन धन्य सभी का करते
श्रद्धा सुमन लिए द्वारे पर
आस लगाए भक्ति प्रगाढ़।
हे दिव्य ज्योति हे परम धाम
चरणों में कोटिक है प्रणाम।

श्री रमेश चन्द्र गुप्त जी

भगवान ने कहा है कि मैं मानव के कल्याण के लिये यगु-युग में अवतार लेता हूँ अर्थात् पञ्च भौतिक शरीर धारण करके पृथ्वी पर प्रकट होता हूँ यद्यपि अव्यक्तरूप में भगवान हर समय और हर स्थान पर रहते हैं। जिस प्रकार भगवान के उस अवतार रूप को प्रत्येक मनुष्य पहचान नहीं पाता, उसी प्रकार जब वह गुरु के रूप में अवतरित होते हैं तब भी हम उनको पहचान नहीं पाते। गुरु भगवान का अवतार ही होता है।

हमारे गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी महाराज 16 दिसम्बर 1916 को अवतरित हुए और 15 अप्रैल 1952 को 35 वर्ष 4 माह के जीवन काल में लाखों लोगों का मार्गदर्शन कर चले गये। इस अल्पकाल में गुरुदेव ने इतने साहित्य की रचना कर दी जो वर्तमान में भी लोगों का मार्गदर्शन कर रहा है और भविष्य में भी करता रहेगा।

आज गुरुदेव भले ही स्थूल रूप में हमारे बीच में नहीं हैं। किन्तु सूक्ष्म रूप में वह हमेशा हमारे साथ हैं और आवश्यकता अनुसार मार्गदर्शन भी करते हैं।

ऐसे सद्गुरु देव को हम भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं जिन्होंने कृपा करके हमें अपनी शरण में लिया है।

श्री सुभाष ग्रोवर जी

गुरु गोबिन्द दोनों खडे, काके लागूँ पाय।
बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो मिलाय॥

गुरु की महिमा का वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता। जो सीमित होता है वह असीम की महिमा का वर्णन कैसे कर सकता है। गुरु की महिमा तो असीम है। गुरु महाराज हमारा सम्बन्ध परमात्मा से जोड़ते हैं और कहते हैं हमारा सम्बन्ध परमात्मा के साथ पहले से ही है।

गुरु महाराज की कृपा सदैव हमारे पर रहती है। सांसारिक दु:ख से रक्षा होती है और परमात्मा से एकत्व स्थापित होता है। दु:खों की अत्यन्त निवृत्ति होती है। हम गुरु की कृपा से उऋण नहीं हो सकते। उनके कथनानुसार चलना ही हमारी सच्ची श्रद्धांजलि है।

श्रीमती कुसुम माहेश्वरी जी

तुमसे ही मिले हैं भाव मुझे,
उनको गुरुवर स्वीकार करो।
मैं मौन रहूँ, सबकी सुन लूँ,
अन्दर बाहर से सम भी रहूँ॥
वह शक्ति मुझे देना गुरुवर,
समता स्थिरता मुझ में हो।
क्रोध गुरु जी कम कर दो,
क्षमा भाव मुझमें भर दो॥
तुमसे ही मिले हैं भाव मुझे,
उनको गुरुवर स्वीकार करो।
श्रद्धा के सुमन समर्पित हैं,
पुष्पांजलि गुरु स्वीकार करो॥
इतनी कृपा गुरुवर कर दो,
हर पल हर क्षण सुमिरन दे दो।
तुमसे ही मिले हैं भाव मुझे,
उनको गुरुवर स्वीकार करो॥

श्री विजयेन्द्र भण्डारी जी

गुरु सों कौन बड़ो जग माहीं?
गुरु पितु मात जा में समाहीं!
गोद लियो माँ सम प्रीत कियो
ज्ञान दियो हृदय जीत लियो
जब भी देखा जन फिसल रह्यो
पितु सम दण्ड निज हाथ गह्यो
परन्तु शिष्य पर घात न करयो
ऐसी कृपा कौन करे जग माहीं
गुरु सों कौन बड़ो जग माहीं?
दिन दुगना राति बढ़े चौगुना
ऐसा भाव करे मान अपना
यदि फूले जन सफलता पाए
खींच कान बुद्धि ठिकाने लाए
मन में मैल न फिर भी लाए
ऐसी कृपा कौन करे जग माहीं
गुरु सों कौन बड़ो जग माहीं?

मई 10, 2022

❖ ❖ ❖

श्री गुरुदेव की पुण्य स्मृति में

नाथ एक बर मांगऊं, राम कृपा करि देहु।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुँ घटै जनि नेहु॥

श्री गुरुदेव जी के अति कोमल कमल रूपी चरणों में मेरा आदर सहित नमस्कार। श्री गुरुदेव! इस वर्ष भी आपके स्नेही बच्चे आपको श्रद्धांजलियाँ अर्पित करेंगे; मैं भी आपकी स्मृति में आँसू भरी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ। हे नाथ! स्वीकार करना। मेरे भगवन, आप हमें पथ-प्रदर्शक के बिना छोड़ कर क्यों चले गये? यह विरह वेदना भरा जीवन हमें भारी हो रहा है। भगवन! नौ वर्ष से हम आपकी याद में तड़पते रहे हैं। इस अप्रैल के महीने में तो हमें आपकी याद विशेष रूप से तड़पा देती है। इसी महीने में हमारे गुरुदेव जी हमें तड़पते छोड़ कर राम धाम को सिधारे थे। मेरे भगवन! जो पवित्र प्यार आप से मिला वह हमारा जीवन आधार है; मात गंगे! तेरी पवित्र लहरों ने मेरे भगवान गुरुदेव जी को सदा के लिये अपने में समा लिया। माँ! हम तेरी लहरों में अपने गुरुदेव जी के दर्शनों को पाते हैं। तू धन्य है गंगे।

मेरे दाता! मैं आपसे हाथ जोड़ कर एक वर मांगती हूँ; मैं किसी भी जन्म में आऊँ किन्तु आपके चरण कमलों में मेरी प्रीति सदा बनी रहे।

– (अप्रैल 1961 में साधिका विद्यावती के उद्‌गार)

गीता विमर्श

श्रीमद्भगवद्गीता पंचमोऽध्याय

(गतांक से आगे)

सांख्ययोगौ प्रथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम्॥ 4॥

'सांख्य और योग अलग-अलग हैं – ऐसा मूर्ख लोग बकते है, पंडित नहीं (कहते)। एक (मार्ग) पर भी भली प्रकार से स्थित हुआ व्यक्ति दोनों के फल को पा लेता है'॥ 4॥

सांख्य तथा योग वास्तव में अलग-अलग नहीं हैं। क्यों? एक निष्ठा का पूरी तरह अवलम्बन लेने से दोनों का ही फल प्राप्त कर लिया जाता है।

सांख्य-निष्ठा का फल क्या है और योग-निष्ठा का फल क्या? यह प्रश्न उपस्थित होता है। सांख्य की निष्ठा विवेक की निष्ठा है। आत्मानात्म- विवेक के परिणामस्वरूप व्यक्ति आत्मनिष्ठ हो जाता है। ज्ञान की प्राप्ति होती है। ज्ञान-प्राप्ति से संस्कार दग्ध होते हैं। समत्व आ जाता है सभी के प्रति। संस्कार दग्ध होने का अर्थ है व्यक्ति न केवल आगे के लिए राग-द्वेष से रहित होता है, अपितु विगत राग-द्वेष के बन्धन भी कट जाते हैं। तभी तो नितान्त समत्व सम्भव है। यह अवस्था सिद्ध-संयम की अवस्था है। उसमें न मनोविकारों की सम्भावना है, न बुद्धिगत वैषम्य की। अहं से अतीत है वह अवस्था। उसे ब्रह्मनिष्ठा, ब्रह्मभाव की प्राप्ति, ब्रह्मनिर्वाण भी कहते हैं।

कर्म की निष्ठा तो कर्म को साधन स्वरूप करना है। समुचित निष्ठा से किया गया कर्म प्रभु की उपासना होती है। उसका प्रभाव प्रबल होता है। वह साधक को भगवान् से जोड़ता चला जाता है, निर्मल करता जाता है। वह राग-द्वेष से रहित करता है साधक को। भगवान् की उत्तरोत्तर कृपा होती है। संस्कार क्षीण हो जाते हैं, ज्यों-ज्यों भागवती-चेतना का प्रभाव होता है। ज्यों-ज्यों संस्कार क्षीण होते हैं, वह चेतना और अवतरित होती है। इस प्रकार कर्म के साधन से निर्मल हुआ व्यक्ति, संस्कार रहित हुआ, प्रभुपद में प्रतिष्ठित हो जाता है। फिर नीचे लौटना नहीं होता। वह सदैव दृढ़भूमि पर चलता है। प्रभुकृपा से उसकी सिद्धि होती है। निर्मल होता जाता है और भागवती-चेतना को लाभ करता जाता है।

इन दो निष्ठाओं में साधन का अन्तर है। सांख्य-निष्ठा के अनुसार किसी तरह से भी उस ज्ञान के लाभ हो जाने पर संस्कारों का क्षय होता है। ज्यों-ज्यों उसमें स्थिरता होती है, त्यों-त्यों क्षीण होते जाते हैं संस्कार। कर्म के मार्ग में भगवान् की कृपा क्षीण करती जाती है संस्कारों को और वह तत्व धीरे-धीरे प्रकट होता जाता है।

संस्कार का नितान्त क्षय दोनों में अवश्यम्भावी है। अहंकार से अतीत होने पर ही सिद्धि सम्भव है, भले ही व्यक्ति किसी मार्ग पर चले। समत्व भी आयेगा ही। प्रकृति का बन्धन भी कटेगा। आत्म-तत्त्व की प्रतीति भी होगी। जन्म-मरण भी छूटेगा। यह सब दोनों ही मार्गों पर होता है। इसी लक्ष्य को लेकर तो लोग साधन करते हैं।

जो लोग दोनों मार्गों पर चलने पर होने वाले आन्तरिक परिवर्तन को नहीं जानते हैं, दोनों प्रकार से सिद्ध व्यक्तियों की आन्तरिक स्थिति को नहीं जानते, वे कहते हैं कि सांख्य अलग है और योग का मार्ग अलग है। संसिद्धि-लाभ करने पर दोनों मार्गों के व्यक्ति भीतर से एक से ही होते हैं। कैसे होते हैं? यह ऊपर कहा ही है।

इसीलिये कहा है – 'बालाः' – मूर्ख लोग कहते हैं कि सांख्य और योग के मार्ग अलग हैं। वे अलग नहीं हैं। क्योंकर? 'भली प्रकार से किसी एक मार्ग पर भी स्थिर हो जाने से दोनों के फल को प्राप्त करता है।'

दोनों का फल एक ही हो, तभी तो वह दोनों के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। वह फल क्या है? पुरुषोत्तम धाम की प्राप्ति। 12वें अध्याय के चौथे श्लोक में निर्गुण उपासकों के विषय में भगवान् ने कहा –

ते प्राप्नुवन्ति मामेव।

'वे मुझे ही प्राप्त करते हैं'। मुझे? पुरुषोत्तम को – जिसे सगुणोपासक भक्त प्राप्त करते हैं। वह चेतना, जो एक को प्राप्त होती है, वही दूसरे को। अतः इन मार्गों के अनुयायियों में जो परस्पर विरोध है, जो एक दूसरे को छोटा-बड़ा कहने की प्रवृत्ति है वह व्यर्थ है।

वह पुरुषोत्तम अनन्त है। वह सगुण भी है, निर्गुण भी। जो पहाड़ को उत्तर से देखता है, वह भी पहाड़ देखता है और जो दक्षिण से, वह भी पहाड़ देखता है। जो मनुष्य को आगे से देखता है, वह भी मनुष्य देखता है और जो पीछे से, वह भी उसे मनुष्य ही देखता है। इसी प्रकार से उस अनन्त-भाव सम्पन्न पुरुषोत्तम के लिए कहा जा सकता है। जो निर्गुण है वही तो सगुण है। जो जिसे भावे वह उसका ही अनुसरण करे। इसी विषय पर अधिक प्रकाश 12वें अध्याय में डाला गया है।

'सम्यगास्थितः' – भली प्रकार से जमा हुआ। यदि व्यक्ति भली प्रकार से जम जायेगा किसी मार्ग पर, तभी तो लक्ष्य की प्राप्ति होगी, अन्यथा कुछ हाथ न लगेगा। भली प्रकार से रास्ते पर जम जाना ही साधना की बड़ी बात है। बिना इसके कुछ भी न बनेगा, भले ही किसी मार्ग का अनुसरण किया जावे। जो रास्ते पर चलते नहीं, उन्हें आलोचना के लिये अवकाश बहुत मिलता है। जो रास्ते पर जमा है और चल रहा है, उसे अवकाश कहाँ अपनी शक्ति को बरबाद करने के लिये। अन्त में जाकर दोनों रास्ते एक ही भूमिका पर ले जाते हैं। चलेगा तो उस सम-भूमिका पर पहुँचेगा। तभी विरोध भी दूर होगा। पर जो बातें करेगा और चलेगा नहीं तो न पहुँच पायेगा और न ही उसका भ्रम मिट पायेगा।

ज्ञान के मार्ग का बहुत बोलबाला रहा है। कर्म का मार्ग तो लुप्त हो गया था, भगवान् ने उसे पुनर्जीवित किया। अर्जुन के मन में भी ऐसा भ्रम था। उसे निकालने के लिए इतने स्पष्ट कथन की आवश्यकता हुई, ऐसा प्रतीत होता है।

ज्ञानमार्ग वाले प्रायः अपनी महत्ता स्थापित करते हैं, 'बच्चों का काम है, उपासना, कर्म इत्यादि। यह पहली सीढ़ी है' ऐसी आलोचना कर्ममार्ग के रहस्य को न जानने से होती है। यह अज्ञान की परिचायक है।

निष्ठा हमारी नेत्र (राह दिखाने वाली) होती है। निष्ठा के विषय में सन्देह होने से व्यक्ति का किया-कराया व्यर्थ हो जाता है। बिना दिशा के गति असम्भव होती है, ठीक वैसे ही।

अपने लिए चुनना होगा – जो आपके लिए सम्भव है और रुचिकर भी है वही आपकी निष्ठा हो सकती है। जब हम अपने लिए अपनी प्रकृति अथवा परिस्थिति के विरुद्ध निष्ठा को पकड़ते हैं तो अग्रगति नहीं, मार्गावरोध हो जाता है। तब हम करने की बजाय बोलते हैं। 'आस्थितः' का अर्थ है – संशयरहित होकर टिका हुआ।

इस प्रकार का अर्थात् निष्ठा द्वारा सीमीकरण अग्रगति के लिए अनिवार्य है। अपने अध्ययन, श्रवण तथा भाषण को भी अपनी निष्ठा की सीमाओं में बांधने से आगे चला जाता है। बुद्धि पर अनुपयोगी संस्कारों को डालना मूर्खता है। एक ही चीज को अच्छी तरह पकड़ कर चलने से कुछ मिलता है।

एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय।

प्रत्येक मार्ग की सीमायें हैं। उनकी चर्चा फिर होगी।

यत्साङ्ख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।
एकं साङ्ख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥ 5॥

'जो स्थान सांख्य-निष्ठा का अवलम्बन लेने वालों के द्वारा प्राप्त किया जाता है वह कर्मयोग पर चलने वालों से भी पाया जाता है। जो सांख्य और योग एक है ऐसा देखता है, वह (ठीक) देखता है'॥ 5॥

ऊपर के श्लोक में कही बात को ही अधिक स्पष्ट तथा ज़ोरदार शब्दों में कहा है।

दोनों मार्गों के सिद्ध एक ही आन्तरिक स्थिति को लाभ करते हैं। जो ज्ञानमार्ग का पथिक है वह भी संसिद्ध होने पर कर्मबन्धन से रहित होता है। वह निर्लिप्त हुआ कर्म कर सकता है। यदि ऐसा सम्भव नहीं है तो अभी जो सिद्धि है वह अपूर्ण है। इसके अनुरूप कर्मयोगी, संसिद्ध हुआ, शान्त भी हो सकता है। कर्म करना उसके लिए अनिवार्य नहीं है। वह तो प्रभु चरणों में पड़ा होता है, उसका यन्त्र होता है। प्रभु जैसा चाहें और जब चाहें उसे बरत लें। उसकी कर्म करने से पुष्टि नहीं होती और न करने से ह्रास नहीं होता, यही समता की स्थिति है। यदि यह प्राप्त नहीं हुई तो कर्मयोग की संसिद्धि अभी प्राप्त नहीं हुई।

संसिद्ध ज्ञानी कर्मशील हो सकता है और कर्ममार्ग का अवलम्बी बिना काम किये रह सकता है। सिद्धावस्था में कर्म करना और न करना बराबर है। कर्म की उपयोगिता सिद्धिलाभ होने पर कर्मयोगी के लिए भी समाप्त हो जाती है।

आत्मलाभ, आत्म-साक्षात्कार, ब्रह्मलीन, निर्वाण-लाभादि संज्ञाओं से सांख्य अन्तिम स्थिति का वर्णन करता है। कर्मयोग उसे अकर्म-नैष्कर्म्य कहता है। दोनों में अहंकार से परे की स्थिति है, दोनों में समता है। वैसी स्थिति में आत्मबोध तो स्वयं होता है। आँखें मूँदकर किसी लम्बी समाधि को लगाने की आवश्यकता नहीं रहती कर्मयोगी के लिए, उसके विकार तो साथ ही साथ निकलते चले जाते हैं।

एक उसी पुरुषोत्तम-तत्त्व की प्राप्ति होती है दोनों मार्गों में। हाँ, अनुभव का भेद रहता है, पर तत्व का भेद नहीं होता।

जो इस रहस्य को जानता है, वही तो दोनों मार्गों के एकत्व को जानता है। जो इस रहस्य को नहीं जानता, वह दोनों को अलग देखता है। अतः जो ठीक जानता है वही वास्तव में ठीक देखता है।

देखते हुए भी तो व्यक्ति को कई बार दीखता नहीं। केवलमात्र देखने से ही तो वास्तविकता का बोध नहीं होता। देखना तो वही सार्थक है जिससे सत्य का बोध हो सके। अतः कहते हैं **'यः पश्यति स पश्यति'** जो एकत्व को देखता है 'वह देखता है' दूसरे तो अन्धे हैं। ऐसा लगता है कि उस समय सांख्य के मार्ग का बोलबाला था। कल्याण के लिए स्वरूपतः कर्म-संन्यास आवश्यक समझा जाता था।

उपनिषद् भी ऐसा ही परिचय देते हैं, जैसा कि ऊपर कहा है। भगवद्गाणी भी इसे ही प्रमाणित करती है। भगवान्, कर्म के विषय में जो अज्ञान था उसे दूर करके, कर्म को उचित पद पर स्थापित करना चाह रहे हैं। उसके लिए वे सत्य का ही आश्रय लेते हैं। दूसरे मार्ग की निन्दा करके कर्म की उत्कृष्टता स्थापित नहीं करते हैं, वह गलत तरीका है। सत्य को प्रकट मात्र करना होता है, सो वे करते हैं।

अर्जुन के लिए कर्म की निष्ठा स्वाभाविक थी, परन्तु वह इस रहस्य को समझता नहीं था। अतः कर्म की उपादेयता और महत्त्व को न जानने से कर्म से भागना चाहता था। कर्म का जो निम्नतम भाव है, उसे तो वही विदित था कि कर्म बन्धन का कारण है, पाप तथा दुःख का कारण है।

यह पाँचवाँ अध्याय कर्म करते हुए कर्म-संन्यास कैसे होता है, यही तो बताता है। उसकी भूमिका मात्र है जो ऊपर कहा है। सिद्धि के स्वरूप को समझे बिना संन्यास का रहस्य ही कैसे जाना जाता?

आन्तरिक संन्यास के बिना कल्याण नहीं होता। वह दोनों ही मार्गों में होता है, यह न भूलना होगा।

संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति॥ 6॥

'हे वीर! बिना योग के संन्यास (भी) तो पाना कठिन है। योगयुक्त हुआ मुनि जल्दी ही ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है'॥ 6॥

'योग के बिना संन्यास पाना कठिन है। योग? कर्म का योग। कर्म की निष्ठानुसार किया गया साधन। और संन्यास क्या है? संन्यास का तात्पर्य संन्यास ही

है, भलीभाँति से त्याग, जो त्याग हो चुका हो, छूट चुका हो। किसका त्याग? जो कुछ हमें बांधता है, उस सबका त्याग। बन्धन रहित स्थिति। वह जो भीतर की निर्बन्ध स्थिति है वह कर्मयोग के बिना कैसे प्राप्त होगी? क्या कोई उसके लिए अधिक सुगम उपाय भी है।

बन्धन से छूटने का रास्ता बन्धन में से ही होकर जाता है। विकारों से व्यक्ति धीरे-धीरे ही छूटता है। कर्म करके ही धीरे-धीरे कर्म रहित हो पाता है। यही विकास का स्वाभाविक मार्ग है। समुचित निष्ठा से किया गया कर्म रगड़ देता है प्राक्तन संस्कारों को भी।

संन्यास कोई खेल नहीं हैं। जादू के मन्त्र से प्राप्त होने वाली अवस्था नहीं है। भीतर का पूर्ण रूपान्तर मांगता है संन्यास। मन, बुद्धि तथा प्राण को विकार शून्य होना होगा, आसक्ति रहित होना होगा। तभी तो संन्यास हो पाएगा, तभी व्यक्ति निर्लिप्त रह सकेगा। किन्हीं कृत्रिम साधनों के द्वारा किसी अवस्था को अपने पर कुछ समय के लिए लाद लेने से यह काम कैसे होगा। निम्न प्रकृति का शोधन तो एक प्रक्रिया है। इसकी सिद्धि होने पर संन्यास स्वत: होता है। रास्ते-रास्ते चलते जाओ। लक्ष्य की स्थिति स्वत: ही होती है। ऐसा करने से परेशानी नहीं होती। यह कर्म का मार्ग है। निष्ठा से कर्म करो। निर्मल हो जाओगे।

क्या इसके अलावा भी कोई तरीका हो सकता है? हाँ! ज्ञान के द्वारा संन्यास और विवेक के द्वारा ज्ञान। इसका तरीका? आखिर बिना निम्न प्रकृति के शोधन के विवेक कैसे होगा? कैसे आएगी बुद्धि में स्थिरता? संयम की, तप की कठोर साधना से, निम्न प्रकृति का मर्दन करके, विवेक के द्वारा, ज्ञानाग्नि प्रज्ज्वलित कर कर्मों को दग्ध कर देना – यह है दूसरा रास्ता। इस रास्ते की कठिनाइयों का सुन्दर दिग्दर्शन करते हैं श्रीतुलसीदास जी उत्तरकाण्ड के 'ज्ञानदीपक' नामक प्रसंग में। साधक अस्थिर-भूमि पर चलता है, क्योंकि बिना 'पर' के दर्शन के संयम की नितान्त सिद्धि नहीं है, केवलमात्र नाकेबन्दी है। संयम डिगता है, विवेक सरकता है, ज्ञान लुप्त होता है और फिर वही संसार की निम्न प्रवृत्तियाँ उपद्रव मचाती हैं। अत: यह दुष्कर साधन है, जोखिम है, अनिश्चय है और विकास की दृष्टि से सहज स्वाभाविक नहीं है। यद्यपि असम्भव तो नहीं कहा जा सकता।

अत: कहा **'दु:खमाप्तुमयोगत:'** संन्यास बिना योग के प्राप्त करना कठिन है। ज्ञान के मार्ग को 'छुरे की पैनी धार' कहा है।

कर्त्तव्य-दृष्टि से किया गया कर्म आसक्ति को छांट देता है। प्रभु के लिए किया गया कर्म तो सिवाय मालिक के और किसी को रहने ही नहीं देता। सब संन्यास हो जाता है प्रभु में। योगी प्रभु से अनन्य हो जाता है। कर्म का योग क्रमश: अनन्यता का हो जाता है। फिर संन्यास करने के लिए रह ही क्या जाता है? वह तो स्वयं ही चढ़ जाता है पूजा का फूल बनकर प्रभु-चरणों में।

आगे योग का प्रभाव बताते हैं। **'ब्रह्म, नचिरेणाधिगच्छति'** – बिना देरी के ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है। कर्म-योग का अनुसरण करने वाला साधक जल्दी ही ब्रह्म को पा जाता है। यह मत समझो कि यह रास्ता लम्बा है। क्योंकि, इसमें वैचित्र्य नहीं, क्योंकि इसमें बाह्य तप-त्याग नहीं, क्योंकि इसमें मस्तिष्क की बहुत काँट-छाँट नहीं और पोथी-पाण्डित्य की मांग नहीं, इसलिए यह रास्ता लम्बा है? यह रास्ता सहज है, स्वाभाविक है और सुगम है। योगेश्वर कृष्ण ही इस बात का प्रमाण हैं। वह साधकों के अनुभव के आधार पर बोल रहे हैं। विकास की गतियों की समुचित जानकारी के आधार पर कह रहे हैं। बुद्धि को भी ऐसा ही समझ में आता है।

कर्म का बल कोरे भाव अथवा विचार के बल से कहीं अधिक है। भाव अथवा विचार विशेष बल रखने पर ही कर्म में परिणत होते हैं। कर्म तो दूसरों से भी सम्बन्ध रखता है। वह विशेष बल को प्रकट करता है भाव तथा विचारों की अपेक्षा; अत: दूरगामी है।

(क्रमश:)

पत्र-पीयूष

गुरुदेव महाराज अपने जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गँवाते थे। उनके अनुयायियों के दुःख तथा जिज्ञासाओं का निवारण गुरुदेव पत्रों के माध्यम से भी करते थे चाहे इसके लिये उनको रातों को जागना पड़े अथवा यात्रा करते समय लिखना पड़े, किसी भी साधक अथवा साधिका का कोई भी पत्र अनुत्तरित नहीं रहता था। गुरुदेव द्वारा लिखे गये पत्रों का संग्रह करके 'पत्र-पीयूष' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी। उसी पुस्तक में से चुने हुए कुछ सर्वोपयोगी सन्देश नीचे दिये जा रहे हैं जो क्रमशः आगामी पत्रिकाओं में भी प्रकाशित किये जायेंगे।

❖ ❖ ❖

जो व्यक्ति भगवान की ओर अग्रसर हो जाता है - और जब वह राम-नाम का विधिवत लाभ कर उसका जप-चिन्तन करने लगता है भगवान् की कृपा उस पर सतत प्रवाहित होने लगती है और उसे रात्रि-दिवस उठाती है। यह मार्ग दृढ़ निश्चय का, प्रभु के पक्के भरोसे का तथा आत्म-समर्पण का मार्ग है। (पत्र 10)

❖ ❖ ❖

जल्दी सोइये, जल्दी जागिये। थोड़ा भ्रमण अथवा व्यायाम कीजिएगा। पाठ को कम करके भी अधिक जाप करियेगा। खाली समय का सदुपयोग स्मरण द्वारा करें, सब कुछ ठीक हो जायेगा। (पत्र 11)

❖ ❖ ❖

आप लगन-पूर्वक साधन करते चले जाइएगा। अपने व्यवहार को जाँचना - इसमें सरसता को लाना तथा सेवा की जीवित जागृत मूर्ति बन जाना, भक्ति के पथ में एक ऊँचा आदर्श है। (पत्र 14)

❖ ❖ ❖

साधक अपनी वाणी तथा विचारों को ऐसा संयमित करने का यत्न करता है कि कार्य में शक्ति का अपव्यय तो होता ही नहीं, बुरे संस्कार भी ग्रहण नहीं कर पाता। वाणी को मधुमयी लोकहितकारिणी तथा आत्महितकारिणी बनाना उसका ध्येय होता है। प्रसन्नचित्तता को वह कभी भी नहीं खोता। (पत्र 15)

❖ ❖ ❖

अपने को अधिकाधिक खोलते चले जाना, मन, बुद्धि, तन - सभी का समर्पण उसमें करते चले जाना और उससे भी अधिक यह दृढ़ विश्वास रखना कि भगवान ने आप का चार्ज ले लिया है। वह स्वयं आपको लेते चले जायेंगे और जब तक पूर्ण पद की आपको प्राप्ति नहीं होती तब तक छोड़ेंगे नहीं। (पत्र 17)

❖ ❖ ❖

नाम का तन्तु इस भक्त तथा भगवान के नाते को जोड़ने तथा उसे दृढ़ करने वाला है। यही इस सारी साधना की आधार शिला है। (पत्र 17)

❖ ❖ ❖

यदि आपका विश्वास भागवत जीवन में है, यदि चाह उसके पाने की है तो दुर्वासनायें स्वतः क्षीण होती चली जायेंगी। इनका साक्षी बनना सीखो, इनसे युद्ध करना नहीं। यही शान्ति का सुगम उपाय है। भगवान् का अवलम्बन लीजियेगा। सच्ची लगन के लिये प्रार्थना कीजियेगा। बाकी सब कुछ स्वयं होगा।(पत्र 18)

❖ ❖ ❖

आध्यात्मिक साधन में लगन तथा धैर्य ही सबसे आवश्यक सम्बल हैं, इनके बिना सफर करना असम्भव है। (पत्र 19)

❖ ❖ ❖

साधना को जीवन व्यापी बनाने का यत्न करना चाहिये। हम सतत भगवान के सान्निध्य को प्रतीत कर सकें और उसकी सौम्यता तथा समतामयी चेतना में निवास कर सकें। सतत प्रयत्न के बिना, सतत आत्म-समर्पण की भावना को जागृत किये बिना व्यक्ति की प्रगति में शिथिलता आ जानी स्वाभाविक है। (पत्र 21)

❖ ❖ ❖

किसी के कहने मात्र से डर कर हम अपने कर्तव्य से च्युत हो जायें तो यह भीरुता होगी। लोग तो अपने कर्तव्य के लिये जीवन होम कर देते हैं। (पत्र 26)

❖ ❖ ❖

समुचित शिक्षा के बिना प्रतिबन्धों का दूर हो जाना भयानक हो जाता है। नारी की ज़िम्मेदारी समाज तथा जाति के निर्माण में पुरुष से कहीं अधिक है। जब वह फिसलती है तो परिवारों की सौम्यता नहीं रहती और सन्तति तबाह हो जाती है। (पत्र 27)

❖ ❖ ❖

अपनी किस्मत को, भाग्य को कोसना तो भक्तों का काम नहीं। भक्त तो हर अवस्था में प्रसन्न रहा करते हैं। उन्हें तो भगवान का भजन, उसके जनों की सेवा तथा जीवन की निर्मलता चाहिये। इतने में सन्तुष्ट रहते हैं। शरीर के कष्ट के लिये तथा अर्थ के कष्ट के लिये वह दुखी नहीं होते और जब इतनी भक्ति उनमें उदित हो जाती है, श्रीराम के प्रति इतनी श्रद्धा तथा विश्वास हो जाता है तो उनके कष्ट भी निवृत्त हो जाया करते हैं। (पत्र 28)

❖ ❖ ❖

सेवा ही जीवन की उपयोगिता है और साधना इसका सार। सेवा तथा साधना मिल कर सोना तथा सुगन्ध हैं। यही उच्च जीवन का आदर्श होता है। (पत्र 29)

❖ ❖ ❖

ध्यान में आगे बढ़ने पर अवस्थायें बदला करती हैं। यह उन्नति के ही लक्षण हैं। नाम का प्रभाव सूक्ष्म हो जाता है। स्थूल मन को उसकी प्रतीति नहीं होती। (पत्र 29)

❖ ❖ ❖

जितनी दृढ़ हमारी लगन होती है उतना ही प्रबल तथा अक्षय हमारा संकल्प हुआ करता है। (पत्र 30)

❖ ❖ ❖

संकल्प-विकल्प होने पर भी भागवती शक्ति अपनी क्रिया जारी रखती है। Superconscious (ऊर्ध्व चेतना) में Cosmic Kundalini (जगत कुण्डलिनी) का काम तो रात दिन चला करता है। ज़रा सा प्रयत्न करने से क्रिया की प्रतीति होने लगती है। जब हम किसी अन्य कार्य में व्यस्त होते हैं उस समय भी अन्दर काम होता रहता है। यह भगवान की शक्ति है जो हमें पल-पल बदला करती है। (पत्र 30)

❖ ❖ ❖

Letters to Seekers

Letter No. 3 : Shri Ram : Hari Bhawan, Nainital.

25.05.1944

Dear .....,

I received your letter of the 18th. on reaching Nainital on the 22nd. I was pleased to learn that you had another akhand japa. Gradually you will realize the true worth of this sort of japa. The vibrations which are created lift the individual in spite of himself and the more of japa is done in the same room the more powerful do the vibrations become. We have to keep up the sanctity of the place by avoiding base emotions and wordly talks from taking place in that place. Thus the vibrations remain intact and are reinforced by another akhand japa.

Last year I went to Badrinath. It is situated at a height of about eleven thousand feet from the sea level and on the bank of the Alkhnanda. I do not find the vibrations there so lifting as I find in an akhand japa after twelve hours or so, when the participants are serious. You can judge the utility of akhand japa from this.

I hope you will continue to perform it from time to time, weekly or fortnightly. May the Lord bless all the participants.

Myself I prefer either the Kirtan of Rama Nama alone (for that is Kirtan and Jap in one) or a Kirtan which embodies a prayer which is able to arouse deep and noble emotions in us. This emotion sends up the prayer and arouses a response from Above which goes a long way to transform the Sadhakas. If we are to sing the name why not sing the name which already we have taken up and which pervades our being, which is a living mantram unto us.

However I object to no Kirtandhavani. Though mere sound effect cannot satisfy me for it does not produce the desired amount of stillness within and without. The current Kirtans rely more upon the sound effect, at least, so it seems to me.

Fixing up on the number is a sort of check in the first instance upon oneself. The same thing can be performed by fixing time. The minimum will naturally vary with different persons. I wonder if you could at present do a hundred malas a day. Let that be your minimum, if you can do it without feeling tired. You may do as much more as you like.

Going to sleep, have the name upon your mind, it is important, and so also while taking your food. You will be able to overcome temptation much more easily.

Yes,..... is too young. Then, you will have to look after him. Train yourself to have gentler emotions, kinder words, and loving looks for him, in spite of his uncanny ways. That must transform him and incidentally transform you. May the Lord give you strength and wisdom for it.

My remembrance for one and all. May the Lord bless you all.

With sincere regards,

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

Letter No. 4 : Shri Ram : Hari Bhawan, Nainital.

03.06.1944

My dear .....,

I am in receipt of your letter dated the 28th for which many thanks.

You have stated your difficulty about fixing the number of malas and about time. In fact there is no need of being sentimental about it either. You can manage according to your convenience. I need impose no restrictions as far as you make good use of your morning hours in doing jap. The jap will gradually become meditation. The effort of doing it will be eliminated and you will be going deeper within yourself. You may very well put away the mala when you feel like doing it.

I hope you are trying to develop more and more sincere bhava (भाव) in the satsang. Satsang with me is common worship. It begins with invocation. We try to feel His Presence amongst us and all that we do is by way of worship. Even the talk is an offering at His Feet. With the August Presence amongst us how can we turn aside even for a while and attend to something else. How can we have a word with another in that Presence. That is the spirit which should be cultivated. It will come gradually but the ideal must not be lost sight of. With me the climax is always reached with Kirtan, and hence it is the last item. Spontaneity, not routine should be the leading principle. Even in the case of that which we repeat daily newer (bhava) should come and lift us. I wish you greater and greater success in the Kirtan.

You have asked about the ultimate object of repeating Ram-nam. Being one with the Lord, and being one, we realize the Truth and are perfect. The mind is comparatively stilled long before, and gradually the whole personality – the emotional and physical self included, is over-hauled and rejuvenated. It leads to Peace Supreme that knows no upsetting.

Convey my best wishes to one and all in the family. May you all be graced.

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

पाप होने कैसे बन्द हों?

श्रद्धेय श्री हनुमान प्रसाद जी पोद्दार

(कल्याण संख्या 5, भाग-87, पृष्ठ 677-679 से उद्धृत)

साधक और विषयी में बड़ा दृष्टिभेद है। विषयी व्यक्ति, जिसके सामने संसार है और संसार का लाभ-हानि है वह आदमी जिस कार्य में, जिस वस्तु में, जिस स्थिति में हानि समझता है या लाभ समझता है, उससे दूसरे दृष्टिकोण वाला साधक उससे विपरीत समझता है। दोनों ईमानदार हैं, परन्तु दोनों की दो तरह की आँखें हैं। साधक अपने मूल स्वरूप – साधक-स्वरूप अर्थात् जिसकी वृत्ति भगवान में निरन्तर लगी हुई हो, वह कभी भी उस प्रवाह को भगवान की ओर से मोड़कर दूसरी ओर नहीं ले जाना चाहेगा, उसमें रुकावट नहीं डालना चाहेगा; चाहे उसमें सांसारिक हानि-लाभ कुछ भी होता हो। यह बड़ा दृष्टिभेद है। इसी दृष्टिभेद को लेकर ही अपनी-अपनी आँखें होती हैं और अलग-अलग आँखों से आदमी देखता है।

जगत के जो भी होने वाले परिवर्तन हैं, इनको लोग अपनी दृष्टि से देखते हैं। एक इसको भगवान का लीला अभिनय मानता है और दूसरा इसको अलीक, असत्य, स्वप्नवत्, मृगजलवत् मानता है और तीसरा इसको परम सत्य हानि-लाभ युक्त मानता है। अलग-अलग दृष्टि के अनुसार उनकी अलग-अलग भावना होती है। अलग-अलग भावनाओं के अनुसार अलग-अलग रूपों का दर्शन और अनुभव होता है, सिद्ध की बात तो बहुत उच्च कोटि की है, उसे करने के हम अधिकारी नहीं है। विषयी हम हैं ही, पर हमें साधक बनना चाहिये। इसलिये साधक-दृष्टि आनी चाहिये। साधक-दृष्टि के लिये थोड़ा-सा जगत से मुँह मोड़ना पड़ेगा। जगत की ओर से दृष्टि हटाये बिना हम साधना के मार्ग पर नहीं आ सकते। चाहे हम चलें एक-दो कदम ही रोज, अधिक न चल सकें, न शक्ति हो, परन्तु पथ पर आरूढ़ हो जायें, रास्ते पर आ जायें। जिधर को जाना है उधर मुँह कर लें और चलना शुरू कर दें। उलटी बुद्धि में क्या होता है कि चलता है उलटा और समझता है सीधा। जैसे चोरों से बचने के लिये कोई व्यक्ति चोरों के गिरोह की शरण ले ले तो चोरों से छुटकारा थोड़े ही मिलेगा। इसी प्रकार सांसारिक बन्धन से मुक्त होने के लिये मनुष्य जहाँ तक सांसारिक बुद्धि-कौशल का आश्रय लेगा, वहाँ तक संसार के बन्धन सुदृढ़ होंगे। यह गाँठ और गहरी होगी, खुलेगी नहीं। इसको खोलने में प्रारम्भ में जरा दु:ख होगा; क्योंकि इस बन्धन का अभ्यास हो गया है।

चीन में एक कैदी तीस वर्ष तक एक गीली अँधेरी कोठरी में रहा। कोई नया राजा आया तो उसने सभी कैदियों को छोड़ दिया। वह भी बाहर आया। वह जब प्रकाश में आया तो उसे बड़ा बुरा लगा। उसने कहा कि मुझे वहीं ले चलो, यहाँ तो मैं मर जाऊँगा। उससे कहा गया कि तुम स्वतन्त्र हो गये। उसने कहा – मुझे स्वतन्त्रता नहीं चाहिये, मुझे तो वही कोठरी, वही अँधेरा, वही गीली जगह, वही चूहे-छिपकली जो हमारे साथी थे, वह सब चाहिये। इसी प्रकार से विषयों के साथ बहुत काल से मन को लगाये हुए हम लोगों को जब उन विषयों को छोड़ने की, उनसे मोह-त्याग की बात आती है, तब परेशानी का अनुभव होता है। कई बार जब विषयों के त्याग की बात कही जाती है तो वह दूसरे रूप में विषयों के ग्रहण की बात कही जाती है। वह चाहे बड़ाई – प्रशंसा के रूप में मिल जाये – ये विषय ही हैं। विषय के परित्याग की बात आने पर यदि मन की वृत्ति प्रसन्न हो तो प्रसन्नता की एक कसौटी है। जैसे कोई सामान छीन कर हमें घर से निकाल दे और हमें प्रसन्नता हो, तब हम समझें कि

हम वास्तव में इनसे छूटना चाहते हैं।

पहले-पहले जब हम अपनी विषयों में अभिनिविष्ट मति को भगवान की ओर लगाना चाहेंगे, तब वह मति-बुद्धि जरा घबरायेगी, लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिये। यह अमृत का कड़वा घूँट है। पीना तो अमृत है, पर पहले थोड़ा कड़वा लगता है। इस विषय में भगवान ने गीता के 18वें अध्याय के 37वें श्लोक में कहा है –

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम्॥

जो आत्मबुद्धि के प्रसाद से सात्त्विक सुख प्राप्त होता है, वह पहले जहर-सा प्रतीत होता है। जब कभी अपनी मनोभिलषित संसार की वस्तु छूटना चाहती है या उससे हम अपनी वृत्ति हटाना चाहते हैं, तब वह बड़ा बुरा मालूम होता है, परन्तु यदि वह अमृत है तो पहले भले ही जहर सा मालूम पड़े, लेकिन वह आगे चल कर अमृत का काम करता है। विषय-प्रवण बुद्धि मीठी लगने पर भी जहर का काम करती है और भगवान में लगने वाली बुद्धि पहले कड़वी मालूम होने पर भी अमृत का काम करती है; क्योंकि यह अमृत ही है और वह जहर ही है। **'विषयान् विषवत् त्यज।'** – इस बात को समझकर जो व्यक्ति इसके लिये तैयार हो कि इन सांसारिक पदार्थों को जहर मानेंगे और जहर मानकर इनका त्याग करेंगे तथा इस त्याग में दु:ख दिखने पर भी सुख मानेंगे, जगत से विपरीत बुद्धि करेंगे, तब वह साधक की श्रेणी में आ सकता है और यदि वह जहर को साथ लेकर, जहर में प्रेम रख कर, जहर को पीने में रुचि रख कर जहर से बचना चाहेगा तो जहर से कैसे बचेगा? भोग-बुद्धि से, भोग की कुशलता से, भोगमय सांसारिक बुद्धि-कौशल से यदि हम संसार के बन्धन से मुक्त होना चाहेंगे तो वह सांसारिक बुद्धि-कौशल उस गाँठ को और भी अधिक जकड़ देगा और गाँठ खुलेगी नहीं। गाँठ खोलने के लिये तो सांसारिक बुद्धि-कौशल से मूर्ख होना पड़ेगा। सांसारिक बुद्धि-कौशल में वे बुद्धिमान् लोग श्रीकृष्ण हैं, जनक हैं उनकी बात नहीं है। हम तो अपनी बात करते हैं कि सांसारिक बुद्धि-कौशल से संसार की गाँठ कभी नहीं खुलेगी। संसार की ओर से दृष्टि हटाकर, संसार के हानि-लाभ के विपरीत बुद्धि करके, भगवान की कृपा पर अपने को सर्वथा, सर्वदा छोड़ कर बिना किसी शर्त के, भगवान की सेवा में जब लगेंगे, भजन करेंगे, तब यह गाँठ अपने-आप ढीली हो जायगी और जहाँ भगवान के साथ गाँठ लगी कि यहाँ की गाँठ खुली। उनसे गठबन्धन हुआ कि यहाँ का सारा बन्धन खत्म हो गया। यहाँ का गठबन्धन रखते हुए उनसे गठबन्धन करना चाहेंगे तो कहेंगे कि तुम तो एक जगह ब्याहे हुए हो; हमारे पास क्यों आते हो? हमारे पास आना हो तो निश्चय करके आओ, फिर हम उस गाँठ को तोड़ डालेंगे। उस गाँठ को भी रखो और यहाँ भी गाँठ बाँधो तो यह चीज नहीं होगी –

जहाँ राम तहँ काम नहिं जहाँ काम नहिं राम।
तुलसी कबहुँक रहि सकै रबि रजनी इक ठाम॥

इसलिये अगर हम लोग साधक की श्रेणी में आना चाहें तो जगत के बन्धन से मुक्त होने की यथार्थ इच्छा हमारे मन में जागनी चाहिये। इसको बड़ा दुर्लभ कहा गया है। वेदान्त की साधन-प्रक्रिया में जहाँ साधन-चतुष्टय बताया है, वहाँ मुमुक्षुपना सहज नहीं माना है। पहले विवेक हो फिर विवेक से वैराग्य का उदय हो, षट्-सम्पत्ति की प्राप्ति हो, तब मोक्ष की यथार्थ इच्छा जागती है। पहले तो साधक कहता ही है कि मोक्ष हो जाये – बन्धन छूट जायें, परन्तु जब छोड़ने की बात आती है तो डर जाता है कि अभी रहने दो। अभी कुछ दिन बाद छोड़ेंगे। वह छोड़ना चाहता नहीं है। मुमुक्षुपना आया नहीं है। मुमुक्षुत्व मामूली बात नहीं है, हम लोग कहते हैं मोक्ष को मत मानो। अरे, मोक्ष को तो नहीं माने हैं ही। मोक्ष-परित्याग तो किये ही हुए हैं। मोक्ष का परित्याग नहीं किये होते तो बन्धन में

प्रेम कैसे करते? हम तो जगत के मामूली बन्धनों से राग करते हैं साथ ही और भी कोई बन्धन आ जाये तो उसमें भी बँधना चाहते हैं। ममता के बन्धन में बँधना ही चाहते हैं। एक मकान है तो दो हो जायें, तीन हो जायें। सम्पति और बढ़ जाये यह ममता के बन्धनों को और बढ़ाये रखना है। हम इसे तोड़ना कहाँ चाहते हैं, छोड़ना कहाँ चाहते हैं? हम तो रात-दिन ज्ञान की बात करते हैं, भक्ति की बात करते हैं, दम्भ करते हैं। असली चीज जो मन में है, वह तो स्थिर है ही। हम गाँठ खोलना कहाँ चाहते हैं? ममता के बन्धन में अधिकाधिक बँधना चाहते हैं। गाँठ खोलने के लिये मुमुक्षुत्व की तीव्र इच्छा जाग्रत् होनी चाहिये। वह जागती है कब? जब संसार से वैराग्य हो। वैराग्य कब आता है? जब संसार का रूप हम ठीक-ठीक देखते हैं। यह नित्य है, वह अनित्य है। यह सत् है, वह असत् है। यह बुरा है, वह भला है। जब इन्हें यथार्थ देखते हैं। जब ठीक देखेंगे तो जो बेठीक चीज है, उससे वैराग्य होगा। जब वैराग्य होगा तो शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान – ये छः सम्पत्तियाँ प्राप्त होंगी। जब यह षट्-सम्पत्ति प्राप्त होगी, तब मोक्ष की इच्छा होगी।

हम तो मोक्ष का केवल नाम लेते हैं और चाहते हैं बन्धन। रहना चाहते हैं बन्धन में और बढ़ाना चाहते हैं बन्धन। साधक-श्रेणी में आने पर देर नहीं लगती है। मोक्ष की इच्छा और मोक्ष-प्रायः समान समय में हुआ करते हैं; क्योंकि वह इच्छा की वस्तु है। जबकि भोग इच्छा की वस्तु नहीं है। जगत के भोग में तो कर्म की अपेक्षा है। कर्म होगा तब भोग प्राप्त होगा, परन्तु भगवान की प्राप्ति, मोक्ष की प्राप्ति ज्ञान जनित है। मोक्ष की इच्छा तीव्र हो और मोक्ष होने में देर लगे, भगवान को प्राप्त होने की इच्छा जाग उठे और भगवान् न मिलें – यह सम्भव नहीं है, किन्तु हम में इच्छा ही नहीं है। हम केवल नाम करते हैं साधक का, दम्भ करते हैं या अपने को ठगते हैं। सच्चे साधक बनने का एक क्रम ठीक-ठीक दिखे कि यह जगत् असत्य है। इसमें मोह क्यों करते हैं? जगत् जब असत् और अनित्य दिखेगा, तब अपने-आप इससे वैराग्य होगा। जब इस लोक और परलोक के भोगों से विराग हो गया तो अपने आप षट्-सम्पत्तियाँ प्राप्त होंगी। मन निगृहीत हो जायगा। इन्द्रियाँ निगृहीत हो जायेंगी। सहनशीलता आ जायेगी, शम आयेगा, दम आयेगा, उपरति आयेगी और तितिक्षा आयेगी। भोग सामने रहेंगे, परन्तु मन नहीं जायेगा। तितिक्षा के बाद श्रद्धा आयेगी और सारी शंकाओं का समाधान हो जायेगा। तब मोक्ष की इच्छा जाग्रत् होगी, इच्छा जाग्रत् हुई कि मोक्ष हो जायगा।

इसलिये असली साधक बनना है। यह जो नकली नकाब लगाये हैं, इसे उतारना पड़ेगा। नकली नकाब पहनने से कोई बादशाह थोड़े हो जाता है। भक्त का स्वाँग बनाने से कुछ नहीं होगा। स्वाँग तो नाटकों में होता है। हम भी नाटक कर रहे हैं। वह नाटक का नाम है और वे पात्रानुसार सच कहते हैं। हम झूठ बोलते हैं और नाटक का स्वाँग रचते हैं। यह अन्तर है। इसलिये सच्चे रूप में साधक बनें, सच्ची साधना करें और प्रभु से कृपा की प्रार्थना करते रहें–

यह बिनती रघुबीर गुसाईं।
और आस-बिस्वास-भरोसो, हरो जीव-जड़ताई॥
चहौं न सुगति, सुमति, संपति कछु, रिधि-सिधि बिपुल बड़ाई।
हेतु-रहित अनुराग राम-पद बढ़ै अनुदिन अधिकाई॥
कुटिल करम लै जाहिं मोहि जहँ जहँ अपनी बरिआई।
तहँ तहँ जनि छिन छोह छाँड़ियो, कमठ-अंडकी नाईं॥
या जगमें जहँ लगि या तनुकी प्रीति प्रतीति सगाई।
ते सब तुलसिदास प्रभु ही सों होहिं सिमिटि इक ठाईं॥

(विनय-पत्रिका 103)

क्या खोया क्या पाया

एक नगरी है जिसमें एक विचित्र प्रथा प्रचलित है जिसके अनुसार किसी शुभ दिन को नगरी की सीमा पर प्रातः काल में नगरी के चार प्रतिष्ठित व्यक्ति खड़े हो जाते हैं और सीमा के पास से जो भी व्यक्ति गुजरता हुआ दिखाई पड़ता है उसे पकड़कर नगरी का राजा बना देते हैं और पुराने राजा को, उससे सब कुछ वहीं रखवा कर खाली हाथ नगर की सीमा से बाहर कर देते हैं। नये राजा के साथ भी एक वर्ष और दो वर्ष की अवधि के बीच में वही व्यवहार किया जाता है जो उससे पूर्व के राजा के साथ किया गया था। वह बेचारा रोता-बिलखता, अपने भाग्य को कोसता हुआ अपने अनिश्चित भविष्य की चिन्ता करता हुआ नगर छोड़कर चले जाने पर विवश होता है। यही विचित्र परम्परा सदियों से चली आ रही है।

एक बार ऐसा हुआ कि निर्वासित किये जा रहे राजा को जब नगर के बाहर ले आया जा रहा था तो लोगों ने देखा कि उस व्यक्ति के चेहरे पर दुःख के कोई भाव नहीं हैं, वह पहले की भाँति प्रसन्न मुख और उल्लसित दिख रहा है। कारण पूछने पर उसने बताया कि उसने अपने राज्य की अवधि में नगर की सीमा के पार पहले ही पर्याप्त साधन एकत्रित कर लिये थे क्योंकि वह जानता था कि एक दिन उसे यह राज्य और नगरी त्यागनी पड़ेगी।

यही दशा हम लोगों की है। हजारों में कोई एक यह बात सोच पाता है कि उसे एक दिन सब कुछ छोड़कर जाना है, शेष लोग भी जाते तो हैं ही लेकिन भोग-विलास में इतने लिप्त रहते हैं कि अगले जीवन के बारे में सोचने की फुर्सत ही नहीं मिलती। परिणाम – रोते-बिलखते जाना पड़ता है।

थोड़े से विवेक का प्रयोग करें, मनन करें कि हमने अब तक के जीवन में क्या खोया और क्या पाया, तथा क्या अगले जन्म के लिये संग्रह किया। जो हम सब व्यावहारिक जीवन में करते हैं, क्या हम उसे आध्यात्मिक जीवन में लागू नहीं कर सकते? ज़रा विश्लेषण करें – जब हम विद्यार्थी थे तो वर्ष भर पढ़ाई करके वर्ष के अन्त में उसके बदले परीक्षा में उत्तीर्ण होकर अगली उच्च कक्षा में पहुँचते थे अर्थात् वर्ष के अन्त में उस अवधि में किये गये निवेश का आकलन तो हुआ। इसी प्रकार कक्षा दर कक्षा पार करते हुए बारह वर्ष के निवेश का परिणाम कॉलेज में प्रवेश पाने की पात्रता हुआ। इसके बाद नौकरी की तो पद-प्रतिष्ठा में वृद्धि पाते गये, प्रति वर्ष वेतन-वृद्धि तो होती ही है। यदि व्यापारिक प्रतिष्ठान है तो प्रत्येक वर्ष के अन्त में तुलन-पत्र बना कर देखा जाता है कि गत वर्ष में क्या खोया और क्या पाया तथा आगामी वर्ष में त्रुटियों को सुधार कर और अधिक प्रगति करने की योजना बनाई जाती है।

यह सब करते-करते एक दिन जीवन का अन्तिम दिवस आ जाता है और सहसा आभास होता है कि जीवन का तुलन-पत्र तो हमने बनाया ही नहीं। कभी सोचा ही नहीं कि इस जीवन में हमने कितने पाप कमाये और कितने पुण्य जो हमारे साथ जाने वाले हैं क्योंकि ऊपर दिये गये दृष्टान्त की भाँति सब कुछ यहीं रखवा कर हमें धक्के मार कर नगर से बाहर कर दिया जायेगा। यदि विवेक से काम लिया होता तो समझदार राजा की तरह नगर की सीमा के बाहर सम्पत्ति बना ली होती। अब तो रोते-रोते ही जाना पड़ेगा। तो, पुण्यों की पूँजी अभी से एकत्रित करना आरम्भ करने में ही समझदारी है।

यह तो हुई आसानी से समझ में आने वाली बात। अब तनिक इसी बात को गीता की दृष्टि से समझने की चेष्टा करते हैं। गीता के अनुसार मनुष्य अपने आगामी जन्म का निर्णय इसी जन्म में स्वयं करता है। अध्याय 15 के श्लोक 8 में बताया गया है कि देह का स्वामी जीवात्मा सूक्ष्म शरीर अर्थात्

मन और इन्द्रियों सहित अन्तःकरण को लेकर अन्य शरीर को प्राप्त करता है। या कहें कि हमने जो कुछ अपने अवचेतन मन में जमा करके रखा है उसी के आधार पर अगला जन्म मिलने वाला है। और वह कैसे जायेगा – यह भी बताया है – जैसे वायु गन्ध को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता है।

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात्॥

अध्याय 8 के श्लोक 6 में भी यही बात दूसरे शब्दों में बतायी गयी है –

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

स्पष्ट कहा गया है कि मनुष्य अन्त काल में जिस भाव को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है उस को ही प्राप्त होता है और अन्त काल में उसी भाव में स्थित होगा जिसमें पूरे जीवन-भर रहा है।

यही भाव अध्याय 14 के श्लोक 14 व 15 में दूसरे शब्दों में व्यक्त किया गया है –

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते॥
रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते॥

जब मनुष्य सत्त्वगुण की वृद्धि में मृत्यु को प्राप्त होता है तो स्वर्गादि लोकों को प्राप्त होता है, रजोगुण के बढ़ने पर मृत्यु को प्राप्त होकर कर्मों की आसक्ति वाले मनुष्य में उत्पन्न होता है तथा तमोगुण के बढ़ने पर मरा हुआ मनुष्य मूढ़ योनियों में उत्पन्न होता है। साथ में यह भी कह दिया कि जिस समय पुरुष दृष्टा भाव में स्थित हुआ तीनों गुणों के अतिरिक्त अन्य किसी को कर्ता नहीं देखता वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है।

सारांश यह है कि हम एक अवधि निश्चित करके नियमित रूप से स्वयं का आकलन करते रहें कि इस अवधि में हमने कितने पाप अर्जित किये और कितने पुण्य। इसके अतिरिक्त पाप और पुण्य से भी ऊपर ईश्वर प्राप्ति की दशा में कितने अग्रसर हुए, कितना समय सत्संग में लगाया, कितना नाम-जप में। यह प्रार्थना तो हर समय करते ही रहें – ईश्वर हमारी बुद्धि को श्रेष्ठ मार्ग पर चला।

जय श्री राम।

– रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'

स्वामी सुबोधानन्द जी (प्रमुख आचार्य, सांदीपनी हिमालय) ने एक स्थान पर लिखा है -

''आश्रम के दो पक्ष होते हैं। एक होता है साधना पक्ष और एक होता है व्यवस्था पक्ष। जब व्यवस्था पक्ष प्रधान होता है तो स्वाभाविक है कि साधना पक्ष दब जाता है और जब साधना पक्ष प्रधान हो तो व्यवस्था पक्ष दबता है। दोनों का सन्तुलन हो जाये तो बहुत बढ़िया है लेकिन अगर सन्तुलन न हो पाये तो आश्रम का साधना पक्ष प्रधान होना चाहिए। क्यों कि जिस आश्रम में व्यवस्थापन प्रधान हो जाता है वह सिद्ध पीठ भी गिद्ध पीठ हो जाता है, आधिपत्य का सवाल शुरु हो जाता है, प्रतिस्पर्धा शुरु हो जाती है। इसलिये आश्रम में तो साधना पक्ष ही प्रधान होना चाहिए। जप, तप, योग, यज्ञ, हवन, अध्ययन, अध्यापन, मनन, चिन्तन, ध्यान, समाधि, बस ये प्रधान हैं। व्यवस्था इनके लिये होती है। आश्रम की मुख्य शोभा इन्हीं बातों से है।''

ईश्वर, आत्मा और प्रकृति

सुश्री महादेवी वर्मा कहती हैं –

सिर नीचा कर किसकी सत्ता,
सब करते स्वीकार यहाँ।
सदा मौन हो प्रवचन करते
जिसका, वह अस्तित्व कहाँ?

जिसका अन्त ही नहीं, उसे पूरी तरह जान कौन सकता है; और जो हर स्थान पर है, हर वस्तु में है, उसके सम्बन्ध में कौन कह सकता है कि मैं उसे जानता नहीं? इसीलिए ईशोपनिषद् ने स्पष्ट शब्दों में कहा है – 'जो कहता है कि मैं उसे नहीं जानता हूँ, वह गलत कहता है, और जो कहता है कि मैं उसे जानता हूँ, वह भी गलत कहता है। दोनों ही नहीं जानते कि वे क्या कह रहे हैं। ईश्वर में रहते हुए भी जो कहता है कि मैं उसे नहीं जानता, वह उसी मछली की तरह है, जो सागर में तैर रही हो और कह रही हो कि मैं पानी को नहीं जानती। मैं प्यासी हूँ। इसी पर कबीर जी कहते हैं –

'पानी में मीन प्यासी, मुझे देखत आवे हांसी'

और ईश्वर में रहते हुए भी जो दावा करता है कि वह ईश्वर को पूरी तरह जानता है, वह उस चिउंटी की तरह है, जो हिमालय की किसी गुफा में रेंगती हुई दावा करे कि मैं हिमालय को जानती हूँ। इसी विषय में कबीर जी कहते हैं –

सात समंद की मसि करौं, लेखनि सब बनराइ।
धरती सब कागद करौं, हरि गुण लिखा न जाइ॥

कहने का अभिप्राय यह है कि सात समुद्रों की स्याही बनाकर जंगल के सारे वृक्षों को कलम बनाकर, इस पृथ्वी को कागज बनाकर यदि लिखा जाये तो भी श्रीहरि के गुणों का पूरा बखान करना अति कठिन है।

यह सब कुछ जो दीखता है या सूझता है, समझ में या अनुभव में आता है, मैं, आप, दूसरे लोग, पशु, पक्षी, हरे खेत, झरती हुई नदियाँ, ऊँचे-ऊँचे पहाड़, चन्द्रमा, आकाश, ग्रह सूर्य और उनसे भी परे सब कुछ का एक मात्र आधार है वह चेतन सत्ता जो तीन रूपों में प्रगट है – ईश्वर, आत्मा और प्रकृति।

प्रकृति का गुण यह है कि वह है, जैसे गीली मिट्टी का ढेर है। हम उसे किसी भी रूप में परिवर्तित कर सकते हैं। सोना भी वही है, लोहा और आग भी वही है। उसका अपना रूप नहीं, अपना कोई नाम नहीं। उसके लिये न सुख है न दुःख। आत्मा के दो गुण हैं। पहला यह कि वह है, जैसे प्रकृति है; दूसरा यह कि वह जीवित है – सुख और दुःख दोनों को समझता है, इच्छा भी करता है, आशा भी। ईश्वर में तीन गुण हैं – पहला यह कि वह है, जैसे प्रकृति है, दूसरा यह कि वह जीवित है, ज्ञानवान है, शक्तिमान है, जैसे आत्मा और तीसरा यह कि वह आनन्द से भरपूर है – स्वयं ही आनन्द रूप है। दूसरे शब्दों में –

प्रकृति 'सत्' है।
आत्मा 'सत्' और 'चित्' है।
ईश्वर 'सत्' 'चित्' और 'आनन्द' है।

परन्तु इतनी बात सुन लेने पर भी हमारे सन्देह बने रहते हैं। कुछ लोग प्रकृति को ही सब कुछ मानते हैं। कुछों के मत में आत्मा परमात्मा का एक अंश है, जो प्रकृति के चक्कर में फंस गया है, और कुछ लोगों के मतानुसार 'आत्मा' सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान् है। वास्तव में आत्मा न तो प्रकृति है, न ईश्वर है। यदि वह ईश्वर होता तो उसे कभी दुःख का अनुभव न होता क्योंकि ईश्वर तो आनन्द स्वरूप है। यदि वह प्रकृति (जड़) होता तो उसे सुख और दुःख का अनुभव ही न होता।

अब यह प्रश्न शेष रहता है कि 'ईश्वर क्या है?' उपनिषद् और वेद में नचिकेता की कहानी आती है। नचिकेता के पिता ने उसे यम के पास भेजा। यम के घर पहुँच कर वह तीन दिन भूखा प्यासा बैठा रहा। यम बाहर से वापिस आये तो भूखे अतिथि को अपने द्वार

पर पाकर अफसोस किया; प्रायश्चित करने के लिये वे बोले – 'मैं तुम्हें तीन वर देता हूँ, जो मांगोगे वही मिलेगा'। नचिकेता ने पहले वरदान में अपने पिता की प्रसन्नता मांगी। दूसरे में अपनी माता की दीर्घायु के लिये कामना की और तीसरे में यह जिज्ञासा की कि भगवान का स्वरूप क्या है? यम ने कहा, 'तूने अपने लिए कुछ नहीं मांगा। मैं तुझे सब कुछ दे सकता हूँ – सारी पृथ्वी का राज्य, अनन्त धन, अक्षय यौवन, सुन्दरता, प्रभुता आदि'। नचिकेता ने कहा, ''यह सब कुछ मुझे नहीं चाहिये, क्योंकि यह सब कुछ नष्ट होगा। मुझे अविनाशी ब्रह्मज्ञान चाहिए।'' यम के बार-बार जोर देने पर भी जब नचिकेता ने अपना हठ नहीं छोड़ा, तब यम ने समझाना प्रारम्भ किया कि प्रकृति क्या है, किसकी शक्ति से वह रूप बदलती है। आत्मा क्या है, किसकी शक्ति से वह शक्तिवान बनता है। सब कुछ सुनने के पश्चात् नचिकेता ने कहा, 'लेकिन मैं तो ईश्वर का रूप जानना चाहता हूँ, जिसकी शक्ति से यह सब कुछ प्रकाशित है'। यम ने उसके हठ को देख चिल्ला कर कहा, ''चुप रह बच्चे! यदि इससे आगे पूछेगा तो तेरा सिर कट जायेगा।'' यह केवल एक कहानी है, किन्तु इसका तात्पर्य यह है कि आत्मा के लिये, चाहे वह मनुष्य के रूप में हो या किसी और रूप में – परमात्मा को उसके पूरे रूप में देखना असम्भव है। परमात्मा अपार है और आत्मा संकुचित है।

ईश्वर का पूरा रूप न कभी वर्णित किया गया है और न किया जा सकेगा। आत्मा उसे केवल अनुभव कर सकता है। वह भी उस समय जब वह अपनी शुद्ध अवस्था में हो। तुलसी दास जी ने कहा है –

''निर्मल मन जन सो मोहि पावा''

तभी भक्त और योगी अपने अनुभव के अनुसार कहते हैं –

ईश्वर अनन्त है, असीम है, सर्वशक्तिमान है, आनन्द का भण्डार है, न्यायकारी है, कल्याणकर्ता है, शंकर है, आदि।

माया दीन दयाल की, दीखत है चहुँ ओर।
मेरा जग में कुछ नहीं, जो कुछ है सब तोर॥

– पत्रिका के अप्रैल 1962 अंक में
उर्मिला सहगल के उद्‌गार

भजन

जगत में कोई ना तेरा रे
छोड दे अभिमान त्याग दे मेरा मेरा रे॥

1. काल करम बस जग सराय बिच कीन्हा डेरा रे।
   इस सराय में सभी मुसाफिर रैन-बसेरा रे॥ जगत में.....
2. जिस तन को तू सदा सँवारे साँझ-सवेरा रे।
   इक दिन मरघट पड़े भस्म का होकर डेरा रे॥ जगत में.....
3. मात-पिता भ्राता सुत बांधव नारी घेरा रे।
   अन्त न होय सहाय काल जब देवै घेरा रे॥ जगत में.....
4. जग का सारा भोग सदा कारण दुःख केरा रे।
   भज मन हरि का नाम पार हो भव-जल बेरा रे॥ जगत में.....
5. दीन-दयालु भक्तवत्सल हरि मालिक तेरा रे।
   दीन होय उनके चरणों में कर ले डेरा रे॥ जगत में.....

निर्वाण दिवस साधना शिविर का विवरण

श्री गुरु महाराज ने 15 अप्रैल 1952 के प्रात:काल में नश्वर देह को त्याग कर हरिद्वार की पावन भूमि पर निर्वाण प्राप्त किया था। उसी समय से चली आ रही परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी दिनांक 14 अप्रैल 2022 की रात्रि को साधकों द्वारा एक-एक घंटे की ड्यूटियाँ लगाकर सायं 7:00 बजे से 15 अप्रैल 2022 प्रात:काल 6:00 बजे तक साधना धाम हरिद्वार में अखण्ड जाप का आयोजन किया गया। 6:00 बजे सभी साधकगणों ने गंगा घाट पर जाकर गुरुदेव को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। दोपहर को ब्राह्मण भोज के साथ भण्डारे का आयोजन किया गया और दोपहर 3:30 बजे की सभा में शिविर सम्बन्धित कार्यों का विभाजन करके अखण्ड जाप की ड्यूटियाँ आबंटित करते हुए शिविर का विधिवत् शुभारम्भ किया गया। इस शिविर की पूर्ति 21 अप्रैल 2022 की प्रात:काल को की गई तथा रास्ते का भोजन देकर सभी साधकों को विदा किया गया। इस शिविर में लगभग 110 साधकों ने भाग लिया और 10 नये सदस्यों ने दीक्षा ली। शिविर की अवधि में दैनिक कार्यक्रम इस प्रकार रहा –

सायंकाल का सामूहिक जाप 7:00 बजे से 8:00 बजे तक, 8:00 बजे से अगले दिन प्रात: 5:00 बजे तक दो-दो साधकों द्वारा ड्यूटी और 5:00 बजे से 6:30 बजे तक सामूहिक जाप तथा भजनों के साथ अखण्ड जाप की पूर्ति। प्रात: 6:30 बजे से 7:00 बजे तक चाय, 7:00 बजे से 8:00 बजे तक योग साधना अथवा भ्रमण (योग साधना का मार्गदर्शन श्री सुभाष ग्रोवर जी द्वारा किया गया)। 8:00 बजे से 8:30 बजे तक दलिया प्रसाद। 9:00 बजे से 10:30 बजे तक प्रतिदिन गीता पाठ तथा गीता पर प्रवचन, दोपहर 12:00 बजे से 1:00 बजे तक भोजन, 1:00 बजे से 3:00 बजे तक मौन, 3:30 बजे से 5:00 बजे तक भजन व व्यावहारिक साधना, सायं 5:00 बजे से 5:30 बजे तक चाय, 5:30 बजे से 7:00 बजे तक मन्दिर में भजन, 7:00 बजे से 8:00 बजे तक सामूहिक जाप के साथ अखण्ड जाप पुन: आरम्भ। 8:00 बजे से 8.30 बजे तक दलिया प्रसाद, 8:45 बजे से 9:30 बजे तक विनोद-गोष्ठी, रात्रि 9:30 बजे से प्रात: 5:00 बजे तक शयन।

इसी शिविर में नई कार्यकारिणी का चुनाव भी हुआ, जिसका विवरण अन्यत्र दिया जा रहा है।

प्रवचन सार

शिविर में प्रतिदिन दो सत्रों में साधकों द्वारा गीता, गुरुवाणी व व्यावहारिक साधना पर प्रवचन दिये गये जिनका सार नीचे दिया जा रहा है।

श्रीमती सुशीला जायसवाल जी

गुरुदेव महाराज को श्रद्धांजलि अर्पित करने के पश्चात् गीता के अध्याय 16 के श्लोक 3 के एक-एक शब्द की व्याख्या की।

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहोनातिमानिता।

तेज – श्रेष्ठ पुरुषों की उस शक्ति का नाम तेज है जिसके प्रभाव से दुष्ट प्रवृत्ति वालों में भी सद्भाव जागृत हो जाता है।

क्षमा – क्षमा करना व क्षमा मांगना – दोनों ही महत्वपूर्ण हैं। क्षमा मांगना विनम्रता का सूचक है, अहंकार रहित होना दर्शाता है, शान्त भाव का घोतक है। क्षमा मांगने मात्र से वर्षों पुराना वैमनस्य समाप्त हो जाता है। क्षमा मांगने से व्यक्ति छोटा नहीं होता वरन् प्रेम भाव बढ़ता है। इसी प्रकार क्षमा करना भी

महत्वपूर्ण है। क्षमा मोह के वश होकर भी की जाती है – अपना सगा है तो क्षमा कर दिया। क्षमा भयवश भी की जाती है – भय इस बात का कि सामने वाला व्यक्ति इतना शक्तिशाली है कि क्षमा नहीं करने से हमें दण्डित कर देगा। तीसरा है स्वार्थ के वश होकर क्षमा करना जिसको करने से भविष्य में लाभ होने वाला हो। उपरोक्त कारणों से प्रभावित होकर की गई क्षमा कोई क्षमा नहीं है। यहाँ जिस क्षमा की बात की जा रही है वह स्वाभाविक क्षमा है जिसमें क्रोध का अभाव मुख्य है। गुरु महाराज ने बताया है कि जब भी हमें किसी के व्यवहार पर क्रोध आये तो चार बातों का ध्यान रखो –

1. कहीं हमारी वृत्ति का ही तो दोष नहीं है। हमारी अपनी सोच भी गलत हो सकती है।
2. न हम दूध के धुले हैं, न दूसरे लोग। वो गलती कर सकते हैं तो हम भी कर सकते हैं।
3. जैसे हम अपनी कमियों को नहीं जानते वैसे ही दूसरे भी नहीं जानते। आदरणीय शुक्ल जी कहा करते थे कि मनुष्य की मनुष्यता तभी आरम्भ होती है जब वह अपनी गलती देखना सीख लेता है।
4. जैसे हम अपनी गलतियों को जानते हुए भी ठीक नहीं कर पाते वैसे ही दूसरे लोग भी नहीं कर पाते।

धैर्य – तीसरा गुण बताया है **धृति** अर्थात् धैर्य। परिस्थितियाँ अनुकूल हों चाहे प्रतिकूल – दोनों पर ही ध्यान न देना। इन पर ध्यान देने का अर्थ है शरणागत भाव की कमी। दोनों ही परिस्थितियों को भगवान का मंगलमय विधान समझें।

शौचम् – तन और मन दोनों ही निर्मल हों। मन निर्मल होता है सत्संग से, सत्साहित्य के अध्ययन से। शरीर की शुद्धि होती है स्नानादि से और स्वच्छ वस्त्र धारण करने से। वाणी की शुद्धि होती है सत्य, प्रिय व हितकारी वचनों से। वाणी पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है। बोलते समय याद रखें कि हम कहीं अर्थ की, अनर्थ की या व्यर्थ की बातें तो नहीं कर रहे। आर्थिक शुद्धि होती है धर्मपूर्वक अर्जित किये गये धन को दान व सेवा में लगाना।

अद्रोहो – बदले की भावना न होना।

नातिमानिता – अपने सम्मान की इच्छा न होना।

श्री विष्णु कुमार जी

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि॥

गीता के अध्याय 3 के श्लोक 20 की व्याख्या करते हुए समझाया कि सब कुछ छोड़कर चले जाना – इस राह का समर्थन गुरुदेव ने नहीं किया है। गृहस्थ जीवन में रहते हुए ही साधना करनी है राजा जनक की भाँति जिसका उदाहरण देकर भगवान ने इस श्लोक में बताया है। राजा जनक ने राजा का कर्तव्य निबाहते हुए भी इतनी उच्च कोटि की सिद्धि प्राप्त कर ली थी कि स्वयं महर्षि वेदव्यास ने अपने पुत्र शुकदेव को शिक्षा प्राप्त करने के लिये राजा जनक के पास भेजा था। राजा जनक से सीख सकते हैं कि किस प्रकार संसार में रहते हुए भी संसार से निर्लिप्त रहा जा सकता है जैसे कमल का पत्ता जल में रहते हुए भी गीला नहीं होता।

भगवान ने मनुष्य को भेजा सृष्टि में सृष्टि चक्र को चलाने में सहयोग देने के लिये। संसार के सभी कार्य सभी के सहयोग से पूर्ण होते हैं। किसान अनाज उत्पन्न करता है तो खेत में हल चलाना पड़ता है तो कोई हल बनाता होगा। हल बनाने के लिय लोहा चाहिये तो कोई लोहा बनाता होगा। लोहा बनाने के लिये फैक्ट्री लगानी पड़ती है, उसको चलाने के लिये कर्मचारी होते है जो पुनः अनाज की आवश्यकता की पूर्ति के लिये किसान पर निर्भर हैं। इस प्रकार यह चक्र पूरा होता है जिसमें समाज के सभी अंगों की सहभागिता होनी आवश्यक है।

यह वही योग है जिसको भगवान ने बहुत पहले सूर्य को कहा था। धीरे-धीरे यह ज्ञान लुप्त होता गया

जिसको अब अर्जुन के प्रति पुनः कहा गया है। भगवान कहते हैं कर्तव्य-पालन के लिये, सृष्टि-चक्र को सुचारु रूप से चलाने के लिये व्यक्तिगत हित की बलि तो देनी ही होगी। युद्ध करना भी लोकहित में है। मर्यादा यदि अहितकर है तो लोकहित के लिये मर्यादा को भी त्यागना होगा। समाज के हित के लिये कोई भी त्याग बहुत बड़ा नहीं होता। हमें पश्चिमी देशों की नकल नहीं करनी चाहिये जहाँ स्वार्थ साधन को प्राथमिकता दी जाती है। जब व्यक्तिगत समस्या को गौण समझा जाता है तभी लोकसंग्रह हो पाता है। यही यज्ञमय ज्ञान है।

श्रीमती अरुणा पाण्डेय जी

गुरु महाराज द्वारा लिखित पुस्तक 'अध्यात्म विकास' में 'विनाश' शीर्षक के अध्याय का सार बताते हुए कहा कि विकास के साथ ही विनाश की व्यवस्था हो जाती है, फिर भी हम चाहते हैं कि विनाश न हो। विनाश अवश्यम्भावी है। बीज मिटकर ही पौधा बनता है। मानव अक्षर लिखता है, फिर स्वयं ही मिटा देता है। तब जाकर लिखना सीख पाता है। इसी प्रकार ईश्वर की ताण्डव लीला हर समय चलती रहती है। भिन्न-भिन्न अनुभवों के लिये भिन्न-भिन्न यन्त्रों की आवश्यकता होती है।

कृष्ण ने तो ऐसी परिस्थितियाँ बना दीं कि अपना वंश ही समाप्त करवा दिया। बिना विनाश के विकास सम्भव नहीं है। शरीर का विनाश भी प्रतिक्षण हो रहा है। फिर नये शरीर का निर्माण होता है।

प्रलय केवल विक्रांति है। हम जब सो जाते हैं तो एक प्रकार से मर जाते हैं. किन्तु फिर जग जाते हैं। इसी प्रकार प्रलय के बाद सृजन होता रहता है। सूर्य प्रतिदिन अस्त होता है, फिर उदय हो जाता है।

यात्रा लम्बी है। प्रयत्न करते रहना होगा। मन का भी शोधन करना होगा और तन का भी। कष्टों व कठिनाइयों को सहना होगा। शारीरिक रोगों से तन का शोधन होता है। विकारों से बचते रहना होगा।

बहन कुसुम माहेश्वरी जी

शिविर में आते हैं तो लगता है कि विश्वविद्यालय में आये हैं। यहाँ आकर हर क्षण कुछ न कुछ सीखते रहते हैं। यहाँ का अनुशासन, सभी साधक भाई-बहनों का एक-दूसरे के प्रति प्रेम-पूर्ण व्यवहार, साधना मन्दिर की भव्यता, शान्ति – ये सभी कुछ सहज आकर्षित करने वाले हैं। ज्ञान से ओत-प्रोत साधकों के प्रवचन, पूरे दिन का कार्यक्रम, सायं को सोने से पूर्व विनोद-गोष्ठी यहाँ से विदा होने के समय रास्ते के भोजन के साथ-साथ शिविर में बिताये गये क्षणों की यादें भी साथ ले जाते हैं।

गुरुदेव महाराज ने बताया है – साधना के दो मार्ग हैं – आरोह का मार्ग अर्थात् ज्ञान मार्ग और अवरोह का मार्ग अर्थात् समर्पण का मार्ग। हमारा मार्ग अवरोह का है। इस मार्ग में साधक अपने प्रयास पर भरोसा न करके महाशक्ति पर भरोसा करता है। अपने को समर्पित कर देता है माँ महाशक्ति के हाथों में। आरोह के मार्ग में स्वयं करना पड़ता है – आत्म-संयम करना होता है। अवरोह में सहस्रार से जो शक्ति आती है वह स्वयं कार्य करती है। हमें केवल भगवान की आज्ञा का पालन करना होता है। राम-नाम का जप करना होता है।

गुरुदेव कहते हैं –

'अब तक लोगों ने जीवन से भागना सिखाया है। गृहस्थी को छोड़ना, सांसारिक सम्बन्धों को तोड़ना, काम-धाम प्रपंच से मुँह मोडना सिखाया है। मैंने तो सीखा है सभी कुछ प्रभु से स्वीकार करना। जिधर हमारा हित होगा उधर वही ले चलेगा हमें।'

'यह साधना प्रेम की साधना है, ज्ञान की साधना नहीं। जो त्याग और वैराग्य से हो सकता है उससे अधिक हो जाता है प्रेम भरी सेवा से।'

'माँ की कृपा हमारी साधना में सर्वस्व है।'

इसलिये माँ की कृपा प्राप्त करने के लिये ही

प्रयासरत रहना चाहिये। माँ की इच्छा के अनुरूप व्यवहार करने में ही कल्याण है।

बहन शशी वाजपेयी जी

संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते॥

गीता के अध्याय 5 के श्लोक 2 की व्याख्या करते हुए समझाया कि, भगवान ने संन्यास और कर्मयोग – ये दोनों ही मार्ग परम कल्याण के करने वाले बताये हैं परन्तु साथ ही यह भी कहा है कि कर्मयोग साधन में सुगम है, और इसलिये श्रेष्ठ है क्योंकि यह गृहस्थ में रहते हुए भी किया जा सकता है। संन्यास में घर छोड़ना पड़ता है, इसमें (कर्मयोग में) जहाँ रहते हैं वहीं योग हो सकता है। गृहस्थ के कार्य करते हुए सतत स्मरण करना है। ऐसा करते हुए गृहस्थी भी संन्यासी ही मानने योग्य है –

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न कांक्षति।

कर्मयोग का पथ स्वाभाविक सरल पथ है। कर्म ही भगवान से मिलाने का साधन बन जाता है यदि वह बिना फल की इच्छा के और बिना राग-द्वेष के किया जाये।

गुरुदेव महाराज कहते हैं – कर्म भक्ति का साधन है। कर्म के बिना भक्ति सम्भव नहीं। कर्म के द्वारा उच्च चेतना जागृत होती है।

अहंकार सबसे बड़ा शत्रु है। सब जगह भगवान के दर्शन करें। **जित देखूँ तित तू ही तू है।** करने कराने वाला वही है, मैं कुछ नहीं करता हूँ। यह भावना रखने से कर्तृत्व के अभिमान से छुटकारा मिलता है। हम अपने बन्धनों को आभूषण मानते हैं। सब कुछ परमात्मा का है, हमारे कर्म भी उसी के हैं, हमारा कुछ भी नहीं है। ज्ञानमार्गी अपने लिये करता है, कर्म योगी संसार के लिये करता है।

मन को निर्मल करना है। छोड़ना कुछ भी नहीं है। उसमें छोड़ने का अहंकार रह जाता है। स्वतः छूट जाये तो उचित है। जो कुछ भगवान ने दिया है उसको ग्रहण करो उसका भोग करो। सन्तोष करो। द्वन्द्वों से रहित हो जाओ। इससे सुखपूर्वक बन्धन से छूट जाते हैं –

सुखं बंधात् प्रमुच्यते।

कर्मयोगी हर कार्य करते हुए परमात्मा का ध्यान रखता है। दो घंटे का ध्यान तो करना ही है, शेष 22 घंटे भी नाम जप चलते रहना चाहिये – उठते हुए, बैठते हुए, खाते हुए, सोते हुए, जागते हुए, ग्रहण करते हुए, त्यागते हुए भी। नाम जप चलते ही रहना चाहिये। राम का नाम महामन्त्र है।

बुद्धि, तर्क-वितर्क बहुत करती है। इसको भगवान में लगा देना चाहिये। सत्संग श्रेष्ठ साधन है।

श्रीमती कमला वर्मा (सिंह) जी

अपना प्रवचन सदा की भाँति इस दोहे से प्रारम्भ किया –

संत समागम हरि कथा तुलसी दुर्लभ दोय।
सुत दारा अरु लक्ष्मी पापी के भी होय॥

भक्ति का मार्ग सुलभ है। गीता के अध्याय 16 के प्रथम तीन श्लोकों में दैवीय गुणों का वर्णन किया गया है। यही लक्षण भक्त के भी होते हैं। अपने प्रवचन में बहन कमला ने अध्याय 16 के श्लोक 1 की व्याख्या समझाई –

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥

भक्त कभी भयभीत नहीं होता। वह कठिनाई में भी, प्रतिकूल परिस्थिति में भी सिर झुकाता, प्रसन्नतापूर्वक सभी कुछ प्रभु से स्वीकार करता है। कोई अन्य हमें प्रसन्न नहीं कर सकता। प्रभु की सत्ता में विश्वास हो तो भय का कोई कारण ही नहीं होता, इसलिये भक्त सदा अभय रहता है।

मन के भाव सदा शुद्ध रखने चाहिये। किसी के प्रति द्वेष भाव न हो। ज्ञान के लिये सदा प्रयत्नशील रहे, योग में स्थित रहे, सात्विक दान करे, इन्द्रियों को

वश में रखे। यज्ञ करे। गीता के अनुसार सब कार्यों को भगवान के अर्पण करना यज्ञ कहलाता है। तप करे – शारीरिक तप, वाणी सम्बन्धी तप और मानसिक तप जो गीता के अध्याय 17 में बताये गये हैं, उनके अनुसार। आर्जवम् अर्थात् मन, वाणी और शरीर से बालक की भाँति सरल हो जाना।

भक्त यह सोचकर निश्चिन्त रहता है कि

होइ है सोइ जो राम रचि राखा।

भक्त हर व्यक्ति में, हर वस्तु में भगवान का दर्शन करता है –

तू ही रमा हर शक्स में जैसे बुना इक जाल है।

दान के लिये अपनी आमदनी का एक भाग नियमित रूप से निकालना चाहिये और उसे पात्रता के अनुसार देना चाहिये। वाणी हमेशा सत्य व मधुर होनी चाहिये। ध्यान रहे हमारी वाणी से कोई आहत न हो जाये। मधुर वाणी से हम शत्रु को मित्र बना सकते हैं, क्रोधी को शान्त कर सकते हैं। सन्त कबीर ने कहा भी है –

ऐसी वाणी बोलिये मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे आपहु शीतल होय॥

अन्त में कहा – राम नाम के जाप से सब विकार नष्ट हो जाते हैं।

श्रीमती दीपा शुक्ल जी

स्वामी जी ने बताया है –

व्यष्टि एवं समष्टि में व्याप्त सूत्र को अध्यात्म कहते हैं। अध्यात्म में केवल आत्मा का विकास होता है। सांसारिक वस्तुओं से कोई सरोकार नहीं। हमारा उद्देश्य है अपना आध्यात्मिक विकास करना।

विकास के लिये त्याग आवश्यक है। सारी सृष्टि एक दूसरे के लिये त्याग कर रही है। सूर्य, चन्द्रमा आदि सभी त्याग कर रहे हैं। त्याग के द्वारा हम आगे बढ़ते हैं। जितना संघर्ष होगा, त्याग होगा उतनी तीव्रता से आगे बढ़ते हैं।

गीता में तीन प्रकार के मनुष्यों का वर्णन किया गया है –सत्त्वगुणी, रजोगुणी व तमोगुणी। सत्त्वगुणी व्यक्ति हर समय भगवान से युक्त रहता है। रजोगुणी कामना से बँधा रहता है। जब हम भगवान से युक्त होकर कार्य करते हैं तो सांसारिक वस्तुएँ तो स्वतः ही प्राप्त हो जाती हैं। रजोगुणी व्यक्ति परिवर्तन चाहता है। तमोगुणी व्यक्ति कोई परिवर्तन नही चाहता, आलस में पड़ा रहता है, कुछ करता ही नहीं है। उसका सारा जीवन व्यर्थ चला जाता है।

ये तीनों गुण हर व्यक्ति में विद्यमान रहते हैं। इनकी मात्रा घटती-बढ़ती रहती है। भगवान कहते हैं – ये तीनों गुण मेरे ही हैं किन्तु ये मुझमें नहीं हैं, न मैं इनमें हूँ। नाम जप करने से हम समझ पायेंगे कि हममें कौन से गुण अधिक हैं। सात्विक गुणों को विकसित करने के लिये हमें अपने अवगुणों को देखना चाहिये। दूसरे लोग भी आलोचना करें तो उनका सम्मान करता चाहिये।

निंदक नियरे राखिये आँगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना निर्मल करे सुहाय॥

हम सभी भगवान के पुत्र हैं। उसके सभी गुण हममें भी हैं। इन्द्रिय सुख का भोग करते समय हम परिणाम को भूल जाते हैं। शरीर को स्वस्थ रखना है, आहार का ध्यान रखना है।

कहना सहना, रहना – शिष्य की भाँति होना चाहिये।

श्री जगत सिंह जी

अपने प्रवचन में श्री जगत सिंह ने सेवा और सत्संग का महत्व समझाते हुए बताया कि जीवन में अध्यात्म विकास के लिये सत्संग अति आवश्यक है। नवधा भक्ति में स्वयं राम ने शबरी के प्रति सत्संग को प्रथम भक्ति बताया था –

प्रथम भगति संतन कर संगा।

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस में अनेक

स्थानों पर इसी बात को अलग-अलग शब्दों में दोहराया है –

सत हरि भजन जगत सब सपना।
बिनु सतसंग बिबेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई॥
बड़े भाग मानुष तन पावा।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा॥

गुरु महाराज ने सत्संग के द्वारा साधकों को जोड़ा। अपने पत्रों में गुरु महाराज ने साधकों को सूत्र दिये। उनमें से एक सूत्र है – **'अपने व्यवहार को जाँचो।'** व्यवहार की कमी पाओ तो सुधारने के लिये गुरुदेव से प्रार्थना करो।

गुरुदेव ने आदेश दिया है – सेवा की प्रतिमूर्ति बन जाना। सेवा तन से भी की जाती है, धन से भी और मन से भी। बुजुर्ग लोग जो आशीर्वाद देते हैं वह मन की सेवा होती है। सेवा से भक्ति बढ़ती जाती है।

साधक का अपना बल नहीं होता, प्रभु कृपा का बल होता है, यद्यपि प्रयास तो स्वयं ही करना होता है।

साधक सदा प्रसन्नचित रहता है (गीता 2/65)–

प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते।

राम नाम के दीपक से सारे विकार नष्ट हो जाते हैं – **मन्त्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा।** कर्म को प्रभु से जोड़ कर करें तो कर्मयोग हो जाता है।

श्रीमती रमन सेखड़ी जी

गीता महाभारत युद्ध के समय भगवान ने अर्जुन को सुनाई थी। इसका पहला श्लोक धृतराष्ट्र द्वारा कहा गया है। धृतराष्ट्र का अर्थ है धूर्त जो मन का प्रतीक है। मन को बुद्धि समझा सकती है जिसका प्रतीक है गांधारी। किन्तु यदि गांधारी रूपी बुद्धि भी आँखों पर पट्टी बाँध ले तो नतीजा महाभारत के रूप में सामने आता है जिसका परिणाम होता है सर्वनाश। इसीलिये गीता के अध्याय 5 के श्लोक 7 में कहा गया है –

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते॥

अर्थात् सब काम करते हुए प्रभु से लिप्त रहें। शरीर से संसार का काम करते रहें परन्तु मन भगवान में लगा रहे। संसार कभी किसी का नहीं हुआ। किसी के पास क्षमता नहीं कि वह किसी का दुःख दूर कर सके। संसार की सभी चीजें महत्वपूर्ण हैं परन्तु वे सब मिलकर भी एक साँस अतिरिक्त नहीं दे सकतीं। इसलिये मोह छोड़ना है, अपना कुछ नहीं मानना।

योग का अर्थ है दो को जोड़ना। हम जब योग करते हैं तो स्वयं को भगवान से जोड़ते हैं। परन्तु हम तो रेशम के कीड़े के समान स्वयं ही अपने सब ओर इतना कुछ जोड़ लेते हैं और उसमें इस प्रकार फँस जाते हैं कि फिर उस बंधन से निकल ही नहीं पाते।

किसी की सेवा करने का अर्थ है भगवान की सेवा करना। प्रभु सब जीवों में समान रूप से विद्यमान है। जिस शरीर से हम सेवा कर पाते हैं वह भी प्रभु की सत्ता से ही कर पाते हैं। हम विशुद्ध आत्मा हैं, औरों में भी वही आत्मा है – यह सोचकर हम किसी से घृणा नहीं कर सकते।

मृत्यु कोई दुःख का कारण नहीं है। नये शरीर की प्राप्ति तभी होती है जब पुराने शरीर को त्यागते हैं।

विजितात्मा – आत्मा को जीतना अर्थात् स्वयं को जीतना, अपनी इन्द्रियों को जीतना। इन्द्रियों को गलत रास्ते पर जाने से नहीं रोकेंगे तो अपनी ही हानि करेंगे। मन क्या है – a bundle of thoughts. इसलिये अपने विचारों पर भी नियन्त्रण करना होगा। अनासक्त रहेंगे तो कर्मों से लिप्त नहीं होंगे।

गीता के अध्याय 6 के श्लोक 47 में बताया गया है कि सम्पूर्ण योगियों में भी जो योगी मुझ में लगे हुए अन्तरात्मा से निरन्तर मुझको भजता है वह सर्वश्रेष्ठ है। भगवान में श्रद्धा बढ़ानी है। इसलिये कहा गया है – **श्रद्धावान्लभते ज्ञानं।** श्रद्धा बढ़ेगी तो विश्वास बढ़ेगा।

स्वामी ज्ञानानन्द जी गाया करते हैं –

गीता अमृत पियो जीवन सुख से जियो न घबराओ। मौका दुर्लभ न व्यर्थ गँवाओ।

श्री पुरन्दर तिवारी जी

साधना पथ के मार्ग पर चलने वाले सभी साधक धन्य हैं। बिना प्रभु की कृपा के इस पथ पर प्रवेश असम्भव है। लाखों में कोई एक होता है जो सतत राम-नाम का जाप कर पाता है। वह दिन बहुत शुभ था जब हमने साधना परिवार में प्रवेश पाया। हम जिस कार्य के लिये आये हैं वह न करके कुछ और करने लगते हैं तो समय नष्ट करते हैं।

गुरु जी के साहित्य में सुविचार भरे पड़े हैं। यहाँ आकर हमें उनका अध्ययन करना चाहिये। उनमें से एक विचार भी प्रतिदिन धारण करें तो हमारी विकास की गति तीव्र हो जाये। गीता पर लगभग 3000 भाष्यकारों ने अपने-अपने भाष्य लिखे हैं किन्तु गुरु महाराज का लिखा हुआ गीता-विमर्श अनुपम है।

गुरु महाराज ने 'अध्यात्म विकास' से पुस्तक लेखन का कार्य आरम्भ किया था जिसका प्रकाशन 1945 में हुआ। पत्र लेखन का कार्य तो गुरुदेव कॉलेज की पढ़ाई के दौरान ही कर चुके थे। गुरु जी का अंग्रेजी में लिखा हुआ दिनांक 1 अगस्त 1935 का पत्र Letters to Seekers में उपलब्ध है और हिन्दी में जिज्ञासुओं को लिखे गये पत्रों में प्रथम पत्र दिनांक 18 फरवरी 1943 का पत्र-पीयूष में छपा हुआ है। इससे पहले के पत्र भी होंगे जो उपलब्ध नहीं हो पाये। इसके बाद तो आध्यात्मिक साधन भाग-1 व भाग-2 और अनेक अन्य पुस्तकें अपने अल्प जीवन काल में लिख डालीं।

गुरु जी की सभी पुस्तकें मौलिक, हैं, उनके निजी अनुभव पर आधारित हैं। कहीं भी अन्य पुस्तकों से उद्धरण नहीं लिया गया। ये सब पुस्तकें गुरुदेव ने हम साधकों के लिये ही लिखी थीं, इसलिये हमें इनका भरपूर लाभ उठाना चहिये।

इसके पश्चात् श्री पुरन्दर जी ने जीवन में अध्यात्म विकास की भूमिका समझाते हुए बताया कि डर से विकास सम्भव नहीं है। भय से या तो कुचले जायेंगे या बागी हो जायेंगे।

श्री अजय अग्रवाल जी

जीवन में बहुत कुछ प्राप्त करके भी अपूर्णता रहती है। जीवन का उद्देश्य क्या है – इस पर विचार करने की आवश्यकता है। कौन सा रास्ता ऐसा है जिस पर चलकर हम पूर्णता को प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिये गुरु महाराज ने उचित मार्गदर्शन किया है। जिससे ज्ञान प्राप्त करें वह स्वयं पूर्ण होना चाहिये। ज्ञान प्राप्त करने के लिये कष्ट तो सहना ही होगा। पहले विद्यार्थी गुरुकुल में रहकर कष्ट सहते थे तभी वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति कर पाते थे। वैसे भी, गुरु तो रास्ता दिखा सकते हैं, चलना तो स्वयं ही पड़ता है।

'जीवन विकास – एक दृष्टि' को पढ़ा। गुरुदेव महाराज ने लिखा है – ''आप कहेंगे कि शरीर में कष्ट होते हैं। हाँ, यह यातनायें हैं, इसमें सन्देह नहीं। लेकिन उनका प्रयोजन है, उनकी शिक्षा और उपयोगिता है। वे व्यर्थ नहीं।''

आगे और लिखा है –

''यदि आप प्रसन्नतापूर्वक दूसरों की सेवा नहीं कर सकते, यदि आप सेवा के अवसरों का तिरस्कार करते हैं तो यह अनिष्टकारक है। आप उन्नति के अवसरों से हाथ धो रहे हैं। प्रेम, सेवा और त्याग के अवसर साधकों के लिये अमूल्य होते हैं। केवल हतभाग्य ही इनसे लाभ नहीं उठाते। आप जीवन में जितना अधिक दे पायेंगे उतना अधिक सुखी होंगे। लेकिन आप को यह समझना है कि सुख जीवन का लक्ष्य नहीं है। ..... परमानन्द की प्राप्ति में सुख कहीं पीछे छूट जाता है।''

श्रीमती सुमन जायसवाल जी

गीता के अध्याय 7 के श्लोक 16 में बताया गया है कि चार प्रकार के भक्त भगवान को भजते हैं। भगवान

को भजने का अर्थ है अनन्य भाव से भजना, अन्य किसी देवी, देवता, परिवारजन, धन-सम्पत्ति, बल-बुद्धि इत्यादि का आश्रय न लेकर केवल एकमात्र भगवान पर ही आश्रित होना। इस प्रकार से जो भगवान की शरण में आते हैं उनमें भी चार प्रकार के भक्त होते हैं। पहले वे जो कामनाओं की पूर्ति चाहते हैं, जैसे ध्रुव भक्त जिसको पिता की गोद के बदले भगवान की गोद की आवश्यकता थी, जैसे सुग्रीव जिसको खोये हुए राज्य व पत्नी को पुनः प्राप्त करने की आवश्यकता थी, और जैसे विभीषण। यह और बात है कि शरण में आने के बाद इच्छाएँ स्वतः ही शान्त हो जाती हैं।

दूसरे प्रकार के भक्त आर्त्त भाव से शरण में आते हैं – कष्ट के निवारण के लिये। ऐसे भक्तों में प्रायः गजेन्द्र व द्रोपदी का नाम आता है परन्तु मेरे विचार से ये इसमें नहीं आते क्योंकि वे अनन्य भक्त नहीं थे। इन्होंने भगवान की शरण में आने से पूर्व दूसरे आश्रय खोजे थे। इसमें उत्तरा आती है जिसने सीधे ही भगवान को पुकारा था।

तीसरे होते है जिज्ञासु जो ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से भगवान की शरण में आते हैं जैसे शंकराचार्य जी।

चौथे प्रकार के भक्त वे होते हैं जो केवल भगवान की प्राप्ति के लिये अथवा स्वाभाविक प्रेम के वश में होकर भगवान को भजते हैं जैसे गोपियाँ।

आध्यात्मिक विकास में गति लाने के लिये कष्ट तो सहना पड़ेगा।

श्रीमती सरोज श्रीवास्तव जी

जीवन हमें मिला है भगवान का भजन करने को। 84 लाख योनियों के बाद मानव शरीर मिला है। सोचें, क्या लेकर आये थे क्या लेकर जायेंगे। जो कर्ज हम संसार से ले चुके हैं, उन्हीं को चुकाने के लिये इस संसार में बार-बार आते हैं। कर्मों की खेती है। जो पहले बोया वह अब काट रहे हैं, जो अब बो रहे हैं वही फलरूप में आगे मिलेगा। इसलिये आगे के लिये अच्छे कर्म ही करने चाहिये।

गुरुदेव भगवान की कृपा सदैव बरस रही है, लेने वाला चाहिये। हम उनकी कृपा का हर क्षण अनुभव करें, उन्हें धन्यवाद दें। राम नाम का खूब जाप करें जो हमारे भीतर और बाहर उजाला कर देगा।

राम नाम मनि दीप धरु जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहि जो चाहसि उजियार॥

हमें पुराने संस्कार क्षीण करने हैं, नए नहीं बनाने हैं।

श्री सुभाष ग्रोवर जी

गीता को अपनाना होगा। परमात्मा तो हमें उपलब्ध हैं। प्रश्न यह है कि हम महत्व किस को देते हैं। गीता के अध्याय 11 के श्लोक 45 में कहा गया है कि भगवान के बराबर भी कोई नहीं है, फिर अधिक तो हो ही कैसे सकता है। देवता भी परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकते, इसलिये मनुष्य शरीर को तरसते हैं। परमात्मा की प्राप्ति केवल इच्छा से हो जाती है लेकिन हम उसकी इच्छा न करके संसारी वस्तुओं की इच्छा करते हैं।

श्री ग्रोवर ने गीता के निम्नलिखित श्लोकों का सन्दर्भ दिया –

न जायते म्रियते वा कदाचि
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥2.20॥
विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति॥2.71॥
भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कारं इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥7.4॥
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्॥7.5॥
द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते॥15.16॥

आगे बताया कि प्रकृति और पुरुष का जो तत्त्व से जानना है वही ज्ञान है। (गीता 13.1)

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः॥

शरीर पल-पल मर रहा है। जल नदी में प्रतिक्षण आगे बहता रहता है। शरीर जन्म से पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा। रहने वाला तो केवल सत है जिसका कभी अभाव नहीं होता और असत का अस्तित्व नहीं होता, वह तो प्रति क्षण बदलता रहता है। (गीता 2.16)

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः॥

निष्काम योगी भी श्रेष्ठ है। ज्ञान मार्ग भी श्रेष्ठ है जिसके द्वारा आत्म और अनात्म को ठीक समझ पाते हैं। पहले सम्बन्ध होता है, फिर सम्बन्ध विच्छेद। जिससे सम्बन्ध विच्छेद हो गया उसकी ओर से हम निश्चिन्त हो जाते हैं। राम नाम का सदैव स्मरण करने से ही परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है जैसा कि गीता के अध्याय 10 के श्लोक 9 व 10 में कहा गया है।

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥
तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥

शरणागति किसी एक में हो सकती है। या तो भगवान का आश्रय ले लो या वस्तुओं का। जड वस्तुओं के त्याग से ईश्वर की प्राप्ति होती है। जब तक ऐषणाओं का तथा अहंता व ममता का त्याग नहीं होता तब तक ईश्वर की प्राप्ति असम्भव है।

बहन कुसुम सिंह जी

हमारी साधना भक्ति मार्ग की साधना है। गीता हमारी साधना का ग्रन्थ है। गीता के अध्याय 8 के श्लोक 14 में कहा गया है –

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥

अर्थात् जो पुरुष हर समय मेरा स्मरण करता है उसके लिये मैं सहज ही सुलभ हो जाता हूँ। भगवान ही सब कुछ हैं, केवल वही हमारे अपने हैं, अन्य कोई नहीं।

सततं – जबसे होश सँभाला है तब से लेकर अन्त समय तक मुझ से जुड़ा रहता है उसके लिये मैं सुलभ हूँ, दुर्लभ नहीं हूँ। जो संसार का आश्रय लेते हैं या अन्य देवताओं का आश्रय लेते हैं उनके लिये दुर्लभ हूँ। बहुत जन्मों के अन्त में यह बात समझ में आती है कि वासुदेव ही सब कुछ हैं। (गीता 7.19)

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

सबकी उत्पत्ति व भरण-पोषण करने वाला भगवान ही है, इसलिये जो कुछ भी वह करता है उसी में सन्तुष्ट रहना चाहिये।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम॥

भगवान ने गीता के अध्याय 9 के श्लोक 22 में स्वयं ही कहा है कि जो भक्त नित्य निरन्तर मेरा चिन्तन करते हैं उनका योग क्षेम मैं स्वयं प्राप्त करा देता हूँ। भगवान से बस यही प्रार्थना करते रहना चाहिये कि हे प्रभु! हमें अपनी शरण में ले लीजिये।

बहन विनती माहेश्वरी जी

अर्जुन विषाद के बाद जब भगवान अर्जुन को समझाना आरम्भ करते हैं तो पहला सन्देश यही देते हैं कि स्वयं को पहचानो। हम कौन हैं? हम शरीर नहीं हैं, हम भगवान के अंश हैं, हम शाश्वत हैं, हमारे अन्दर अनन्त शक्ति है जो हमें विरासत में मिली है। वर्तमान में संघर्ष करते-करते हमें दिव्यत्व प्राप्त करना है, यही हमारा सुनिश्चित भविष्य है। साधक दुःख से दुखी नहीं होता वरन् उसका स्वागत करना है क्योंकि साधक को दुःख भगवान की ओर मोड़ता है। दूसरी ओर संसारी व्यक्ति दुःख आने पर संसार की ओर

दौड़ता है। अध्यात्म से व्यक्ति तब जुड़ता है जब कोई महान् दु:ख आता है अथवा पुराने संस्कार सामने आ जायें।

भगवान की प्राप्ति के लिये निर्मल होना होगा। सुख और दु:ख पानी और साबुन हैं। कुछ भी मांगना नहीं है, सुख भी नहीं। दु:ख उसी को मिलता है जिसको भगवान ऊपर उठाना चाहते हैं। गीली मिट्टी में ही बीज उगता है। दु:ख में भी भगवान का उपकार समझना चाहिये न कि कर्मों का फल।

दु:ख हमें विकास क्रम में तेजी से आगे बढ़ाता है। मार्गदर्शन परमात्मा से मांगें। परदोषदर्शन न करें। पूर्ण समर्पण करना है। जितने अंश में परमात्मा हमारे अन्दर आता है उतने ही अंश में अहम् कम होता जाता है। राम नाम का जप करने से प्रेम और सेवा मिलेगी। उतने ही अंश में परमात्मा के यन्त्र बन जायेंगे।

भैय्या जी एक प्यारा सा भजन गाया करते थे जिसके बोल कुछ इस प्रकार हैं –

तेरे इश्क में यूँ मिटा दूँ हस्ती कि खुदी का न ख्याल हो।

श्रीमती मिथिलेश तिवारी जी

अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती।
सब तजि भजन करौं दिन राती॥

हम लोग भगवान पर तो विश्वास करते नहीं हैं, अन्य देवी-देवताओं को पूजते हैं अर्थात् समर्पण पूरा नहीं है। हर काम करते समय राम का नाम जपते रहें, झाड़ू लगाते समय भी। इस प्रकार घर की एक-एक ईंट राममय हो जायेगी। नाम जपते हुए जिस वस्तु को छुएँगे उसका भी कल्याण हो जायगा।

राम का भक्त जिसके सम्पर्क में आता है जिससे वार्तालाप करता है उसको भी अध्यात्म का लाभ मिलता है। गुरु महाराज की साधना झाँसी से निकलकर सब जगह फैल गई। जैसे गंगा हिमालय से निकल कर गंगा सागर तक फैल गई।

परिवार का आश्रय भक्ति पथ में किसी काम का नहीं। मीरा के पास कौन था? शबरी के पास कौन था? केवल भगवान का ही आश्रय था। हमारी साधना सबका कल्याण करने की है।

श्री राम शरण वर्मा जी,
पूर्व विधायक, पीलीभीत

समुद्र मन्थन में पारिजात वृक्ष भी प्राप्त हुआ था जो इन्द्र को दिया गया। पात्रता के अनुसार सभी को दिया गया था। तैत्तरीय ब्राह्मण ग्रन्थ में उल्लेख है कि देव, पितृ आदि की लालसा रहती है कि एक बार मानव शरीर मिल जाये। ब्रह्मा, विष्णु, महेश के अपने कार्य हैं फिर भी भुवनेश्वरी माँ की आवश्यकता है। ये सब शक्तियाँ हैं इनके शरीर नहीं हैं। विष्णु भगवान ने 24 बार शरीर ग्रहण किया जिससे वे कर्तव्य की पूर्ति कर सके।

प्रसिद्ध साहित्यकार बालकृष्ण भट्ट ने लिखा है कि यह संसार एक नाट्यशाला है जहाँ सबको अपनी-अपनी भूमिका निभानी है। सब प्राणियों में श्रेष्ठ है मानव जिसको मानवता का धर्म निभाना है। हमारा चरित्र अनुकरणीय हो। हम विश्व को प्रकाशित करें।

श्री योगेश पोखरिया,
पुजारी, साधना धाम

पुजारी जी ने आदि शंकराचार्य विरचित **'भज गोविन्दम्'** स्तोत्र को मूल रूप में पढ़कर सुनाया तथा सरल हिन्दी में इसकी व्याख्या की। उसके कुछ अंश यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं। भज गोविन्दम् में शंकराचार्य ने संसार के मोह में न पड़कर भगवान कृष्ण की भक्ति करने का उपदेश दिया है। उनके अनुसार संसार असार है और भगवान का नाम शाश्वत है। उन्होंने मनुष्य को किताबी ज्ञान में समय न गँवाकर और भौतिक वस्तुओं की लालसा, तृष्णा व मोह छोड़कर भगवान का भजन करने की शिक्षा दी है।

भज गोविन्दं भज गोविन्दं,
गोविन्दं भज मूढमते।
सम्प्राप्ते सन्निहिते काले,
नहि नहि रक्षति डुकृङ्करणे॥

अर्थात् हे भटके हुए प्राणी, सदैव परमात्मा का ध्यान कर क्योंकि तेरी अन्तिम सांस के वक्त तेरा यह सांसारिक ज्ञान तेरे काम नहीं आयेगा। सब नष्ट हो जायेगा। (मन्त्र-1)

मन्त्र 5 में कहा गया है – हमारा जीवन क्षण-भंगुर है। यह उस पानी की बूँद की तरह है जो कमल की पंखुड़ियों से गिर कर समुद्र के विशाल जलस्रोत में अपना अस्तित्व खो देती है। हमारे चारों ओर प्राणी तरह-तरह की कुण्ठाओं एवं कष्टों से पीडित हैं। ऐसे जीवन में कैसी सुन्दरता?

मन्त्र 8 में कहा गया है – कौन है हमारा सच्चा साथी? हमारा पुत्र कौन है? इस क्षण-भंगुर, नश्वर एवं विचित्र संसार में हमारा अपना अस्तित्व क्या है? यह ध्यान देने वाली बात है।

मन्त्र 9 में बताया गया है – सन्त महात्माओं के साथ उठने-बैठने से हम सांसारिक वस्तुओं एवं बन्धनों से दूर होने लगते हैं। ऐसे हमें सुख की प्राप्ति होती है। सब बन्धनों से मुक्त होकर ही हम उस परम ज्ञान की प्राप्ति कर सकते हैं।

मन्त्र 18 – जो इंसान संसार के भौतिक सुख-सुविधाओं से ऊपर उठ चुका है, जिसके जीवन का लक्ष्य शारीरिक सुख एवं धन और समाज में प्रतिष्ठा की प्राप्ति मात्र नहीं है, वह प्राणी अपना सम्पूर्ण जीवन सुख एवं शान्ति से व्यतीत करता है।

मन्त्र 20 –

भगवद्गीता किंचिद्धीता
गंगा जल लव-कणिका पीता।
सकृदपि येन मुरारिसमर्चा
तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम्॥

अर्थात् जो जपना समय आत्मज्ञान को प्राप्त करने में लगाते हैं, जो सदैव परमात्मा का स्मरण करते हैं एवं भक्ति के मीठे रस में लीन हो जाते हैं, उन्हें ही संसार के सारे दुःख दर्द एवं कष्टों से मुक्ति मिलती है।

मन्त्र 21 –

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं
पुनरपि जननीजठरे शयनम्।
इह संसारे बहुदुस्तारे
कृपयापारे पाहि मुरारे॥

हे परमपूज्य परमात्मा! मुझे अपनी शरण में ले लो। मैं इस जन्म और मृत्यु के चक्कर से मुक्ति प्राप्त करना चाहता हूँ। मुझे इस संसार रूपी विशाल समुद्र को पार करने की शक्ति दो ईश्वर।

मन्त्र 27 – उस परमेश्वर का सदैव ध्यान कीजिये। उसकी महिमा का गुणगान कीजिये। हमेशा सन्तों की संगति में रहिये और गरीब एवं बेसहारे व्यक्तियों की सहायता कीजिये।

मन्त्र 31 – हमें अपने गुरु के कमल रूपी चरणों में शरण लेनी चाहिये। तभी हमें मोक्ष की प्राप्ति होगी। यदि हम अपनी इन्द्रियों और अपने मस्तिष्क पर संयम रख लें तो हमारे अपने ही हृदय में हम ईश्वर को महसूस कर पायेंगे।

श्री रमेश चन्द्र गुप्त जी, प्रवचन-1

भगवान ने गीता में दो तस्वीरें सामने रखी हैं – आसक्ति और अनासक्ति। जब अनासक्ति की बात करते हैं तो वह सांसारिक वस्तुओं से अनासक्ति के विषय में है, कर्मों और उनके फलों में अनासक्ति की बात है, संसार के रिश्तों से अनासक्त रहने के लिये कहा है। साथ ही यह भी बताया है कि उस आसक्ति को प्रभु की ओर मोड़ दो, क्योंकि यह मन जो है यह कहीं न कहीं तो आसक्त होगा ही। यदि संसार की आसक्ति छोड़नी है तो भगवान में आसक्त हो जाओ, सत्संग में आसक्त हो जाओ, सत्कर्मों में आसक्त हो

जाओ। गीता के अध्याय 7 के श्लोक 1 में कहा गया है –

मय्यासक्तमनाः पार्थ – मुझमें आसक्त मन वाला हो।

मदाश्रयः – मेरे आश्रित हो।

गीता के अध्याय 9 व 18 में कहा है –

मन्मना भव मद्भक्तो
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां (9/22)

अर्थात् एक आसक्ति है संसार के प्रति, दूसरी भगवान के प्रति। दोनों ही प्रकार की आसक्तियों का परिणाम भगवान ने समझाया है।

भगवान में आसक्ति का परिणाम –

1. गीता के अध्याय 9 के श्लोक 22 में कहा है –
   तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
   अर्थात् जो नित्य निरन्तर मेरा चिन्तन करते हैं उनका योगक्षेम मैं स्वयं वहन करता हूँ। उसकी चिन्ता, उसकी देखभाल, उसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति मैं करता हूँ।
2. कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्य भाव से मेरा भक्त होकर मुझको भजता है तो वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है। (गीता अध्याय 9 श्लोक 30 व 31)
   अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
   साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥
   क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।
   कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति॥
3. जो निरन्तर मुझ में मन लगाने वाले, मुझमें ही प्राणों को अर्पण करने वाले आपस में मेरी भक्ति की चर्चा करते हैं उन भक्तों को मैं वह तत्त्व ज्ञान प्रदान करता हूँ जिससे वे मुझको ही प्राप्त होते हैं। इतना ही नहीं, उनके ऊपर अनुग्रह करने के लिये मैं स्वयं ही उनके अज्ञान को ज्ञानरूपी दीपक के द्वारा नष्ट कर देता हूँ। (गीता अध्याय 10 श्लोक 9, 10 व 11)
   मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
   कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥
   तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
   ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥
   तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।
   नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता॥

यदि हृदय में कोई कामना, कोई विकार हो भी तो वह भगवान के दर्शन से तुरन्त नष्ट हो जाता है जैसे रामायण में विभीषण के साथ हुआ था –

उर कछु प्रथम वासना रही।
प्रभु पद प्रीति सरित सो वही॥

इसके विपरीत जो भगवान में आसक्त नहीं होते उनका मन क्षणिक सुखों की ओर आकर्षित होता है, वे हर समय विषय भोगों का चिन्तन करते रहते हैं और परिणाम क्या होता है (गीता अध्याय 2 श्लोक 62 व 63) –

ध्यायतो विषयान्पुसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते॥
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥

विषयों का चिन्तन करने से विषयों में आसक्ति होती है, आसक्ति से कामना, कामना पूर्ति में विघ्न पड़ने से क्रोध, क्रोध से मूढ़भाव, मूढ़भाव से स्मृति में भ्रम, भ्रम से ज्ञानशक्ति का नाश और उसके बाद सर्वनाश। उचित अनुचित का ज्ञान न रहे तो यही होता है।

ये दोनों स्थितियाँ गीताकार ने हमारे समक्ष रख दी हैं, चयन करना हमारे हाथ में है।

प्रवचन-2

संसार में दो ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जो अपने से छोटे को अपने से बड़ा मानते हैं – एक पिता और दूसरा गुरु।

आज रामायण पर कुछ कहने की आज्ञा हुई है।

वास्तव में गीता और रामायण कुछ अलग नहीं हैं। जहाँ गीता में उपदेश कृष्ण और अर्जुन के संवाद द्वारा दिया गया है, वहाँ रामायण में वही ज्ञान और भक्ति अनेक पात्रों के आचरण और सम्वाद द्वारा समझाया गया है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना 77 वर्ष की आयु में आरम्भ की थी जब वह समस्त वेदों, उपनिषदों, पुराणों आदि का अध्ययन कर चुके थे। यही कारण है कि मानस में इन सबका सार भरा हुआ है। उन्होंने मंगलाचरण में स्वयं ही लिखा भी है –

नानापुराणनिगमागत सम्मतं यद्
रामायणे निगदितं स्वचिदन्यतोऽपि।
स्वान्तसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा
भाषानिबन्ध मति मंजुलमातनोति॥

यही कारण है कि गुरु महाराज ने जहाँ गीता को अपनी साधना का ग्रंथ बताया है वहीं यह भी कहा है कि रामचरितमानस का अध्ययन साधकों को प्रतिदिन करना चाहिये क्योंकि इसमें कथानक के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ है।

रामचरितमानस की बहुत सी चौपाइयाँ और दोहे तो गीता का अनुवाद ही हैं। उदाहरण के लिये –

1. **ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः** (गीता)
   ईश्वर अंश जीव अविनासी (रामचरितमानस)
2. **यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारतः** (गीता)
   जब जब होय धर्म कै हानी।
   बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥ (रामचरितमानस)

गीता के अध्याय 18 के श्लोक 67 में कहा गया है कि बिना सुनने वालों के साथ गीता की चर्चा न करें, जो मेरे में भक्ति भाव न रखते हों, अविश्वासी हों, श्रद्धारहित हों, उनसे न कहें और दोषदृष्टि रखने वालों से तो कदापि न कहें।

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति॥

इसी प्रकार रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड के दोहा 128 की चौपाई संख्या 4 व 5 में कहा गया है –

यह न कहिअ सठही हठसीलहि।
जो मन लाइ न सुन हरिलीलहि॥
कहिअ न लोभिहि क्रोधिहि कामिहि।
जो न भजइ सचराचर स्वामिहि॥

गीता के अध्याय 18 के श्लोक 68 में कहा गया है –

य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः॥

जो इस गीताशास्त्र को प्रेमपूर्वक मेरे भक्तों में कहेगा उससे बढ़कर पृथ्वी भर में मेरा कोई प्रिय नहीं होगा, तो उधर रामायण में यही बात कही गई उत्तरकाण्ड के दोहा 129 की चौपाई संख्या 5 व 6 में –

मन कामना सिद्धि नर पावा।
जे यह कथा कपट तजि गावा॥
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं।
ते गोपद इव भवनिधि तरहीं॥

शंकर भगवान ने पार्वती के प्रति रामकथा तब सुनाई थी जब माता पार्वती ने अनुनय विनय के साथ सुनने की इच्छा प्रकट की थी।

इसी प्रकार गीता ज्ञान भगवान ने अर्जुन को तब दिया था जब वह शरणागत हो गया था –

शिष्यतेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।

साधना परिवार की नई कार्यकारिणी का चुनाव

साधना परिवार की नई कार्यकारिणी का चुनाव साधना धाम हरिद्वार के परिसर में दिनांक 20 अप्रैल 2022 की आम सभा में सम्पन्न हुआ। चुनाव के पश्चात चुनाव अधिकारी द्वारा नई कार्यकारिणी की घोषणा की गई जो यथारूप नीचे दी जा रही है।

चुनाव अधिकारी की रिपोर्ट

आज दिनांक 20 अप्रैल 2022 में मेरे द्वारा साधना परिवार की कार्यकारिणी के चुनाव के नामांकन हेतु 21 आवेदन (नामाकंन पत्र) प्राप्त हुए। सभी नामांकन पत्र विधिवत एवं सही पाये गये।

सभी नामांकन पत्र आम सभा को पढ़कर सुनाये गये और उनके द्वारा सर्वसम्मति से ध्वनिमत द्वारा अनुमोदित किये गये। जिनके नाम निम्न प्रकार हैं –

1. श्रीमती सुशीला जायसवाल
2. श्रीमती सोमवती मिश्रा
3. श्रीमती कमला सिंह
4. श्रीमती अरुणा पाण्डेय
5. श्री जगत सिंह
6. श्री दीपक दीक्षित
7. श्री रमेश जायसवाल
8. श्री विष्णु गोयल
9. श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल
10. श्री अनिल चन्द्र मित्तल
11. श्री मोहित मित्तल
12. श्री आर.सी. गुप्ता
13. श्री विजयेन्द्र भण्डारी
14. श्री सुधीर कान्त अग्रवाल
15. श्रीमती रमन सेखड़ी
16. श्रीमती कृष्णा भण्डारी
17. श्रीमती रेवा भण्डारी
18. श्रीमती नीता सहगल
19. श्री हरपाल सिंह राजपूत
20. श्री पुरिन्दर तिवारी
21. श्री सुमीत सेखड़ी

चूँकि कार्यकारिणी में अधिकतम 21 सदस्यों का ही चुनाव किया जा सकता है, अतः ये सभी उपरोक्त नाम मेरे द्वारा निर्विरोध निर्वाचित घोषित किये जाते हैं।

दिनांक 20 अप्रैल 2022 **अनिरुद्ध अग्निहोत्री,** चुनाव अधिकारी

पदाधिकारियों का चयन

दिनांक 21 अप्रैल 2022 को निर्वाचन अधिकारी द्वारा पदाधिकारियों की चयन प्रक्रिया सम्पन्न करके निम्नलिखित परिणाम घोषित किये गये –

1. अध्यक्ष – श्री विष्णु कुमार गोयल
2. वरिष्ठ उपाध्यक्ष – श्रीमती सुशीला जायसवाल
3. उपाध्यक्ष – श्री अनिल चन्द्र मित्तल
4. सचिव – श्रीमती रमन सेखड़ी
5. उप-सचिव – श्री रमेश चन्द्र गुप्त
6. कोषाध्यक्ष हेतु कोई उपयुक्त नाम न आने के कारण श्री अनिरुद्ध अग्निहोत्री को सर्वसम्मति से कोषाध्यक्ष नियुक्त किया गया।
7. प्रबन्धक हेतु कोई उपयुक्त नाम न आने के कारण श्री रवि कान्त भण्डारी को सर्वसम्मति से प्रबन्धक नियुक्त किया गया।

दिनांक 21 अप्रैल 2022 **अनिरुद्ध अग्निहोत्री,** चुनाव अधिकारी

शोक समाचार

अत्यन्त दु:ख के साथ सूचित किया जाता है कि,

बीसलपुर (पीलीभीत) निवासी श्रीमती रेणु अग्रवाल धर्मपत्नी स्वर्गीय श्री राकेश कुमार अग्रवाल का दिनांक 26 मार्च 2022 को निधन हो गया है। उनके सुपुत्र श्री दीपक अग्रवाल ने गुरुदेव के चरणों में अपनी माता जी की आत्मा की शान्ति के लिये प्रार्थना की।

❖ ❖ ❖

कानपुर निवासी श्रीमती ममता सक्सेना धर्मपत्नी श्री सूरज भान सक्सेना का दिनांक 2 मार्च 2022 को निधन हो गया है। उनके परिवार ने उनकी आत्मा की शान्ति के लिये गुरुदेव के चरणों में 5100 रुपये की सहयोग राशि अर्पित की।

❖ ❖ ❖

पूज्य गुरुदेव से विनम्र प्रार्थना है कि इन सभी दिवंगत आत्माओं को अपने श्री चरणों में स्थान दें तथा इनके परिवार जनों को इनका वियोग सहने की यथायोग्य शक्ति प्रदान करें।

❖ ❖ ❖

जरा ध्यान दीजिए

गुस्सा – अक्ल को खा जाता है।
अहंकार – मन को खा जाता है।
चिन्ता – आयु को खा जाती है।
रिश्वत – इन्सान को खा जाती है।
लालच – ईमान को खा जाता है।

दुनियाँ का सबसे बढ़िया जेवर – आप की अपनी मेहनत है।
दुनियाँ का सबसे अच्छा साथी – आप का अपना निश्चय है।

संकलन कर्ता – **कृष्णा भण्डारी**

13.2.2022 से 22.5.2022 तक के दानदाताओं की सूची

साधकगण अपने दान की राशि चैक द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में जमा करवा सकते हैं।

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
Bank of India, Haridwar
A/c No.: 721010110003147
I.F.S. Code: BKID0007210

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
Punjab National Bank, Haridwar
A/c No.: 00112010000220
I.F.S. Code: PUNB0001110

कृपा करके जमा करवाई हुई राशि का विवरण एवं अपना नाम और पता तथा PAN या आधार कार्ड नम्बर, पत्र अथवा फोन द्वारा साधना धाम कार्यालय में अवश्य सूचित करें। जिससे आपको रसीद आसानी से प्राप्त हो जायेगी।

– **रवि कान्त भण्डारी,** प्रबन्धक, साधना धाम, मोबाइल: 09872574514, 08273494285

1.	आर.के. महरोत्रा, दिल्ली	50,000	22.	मिलन शर्मा, दिल्ली	10,000
2.	तेज बहादुर, जनार्दन मिश्रा, अजयवीर द्वारा गौरव मित्तल, बीसलपुर	49,000	23.	नीलम सिक्का, लुधियाना	10,000
			24.	रवि शंकर बाजपेयी, कानपुर	9,000
3.	सतीश खोसला, दिल्ली	31,000	25.	चन्द्रभान गुप्ता, दिल्ली	6,500
4.	ज्ञान चन्द, नोएडा	21,000	26.	स्क्रैप	6,100
5.	मिलन शर्मा, दिल्ली	21,000	27.	हर्ष कपूर, गुरुग्राम	6,000
6.	सतीश खोसला, दिल्ली	21,000	28.	राम कृपाल कटियार, तिलहर	5,100
7.	आविष्कार मल्होत्रा, गुरुग्राम	15,000	29.	सुधा आहूजा, गुरुग्राम	5,100
8.	राजेश गुप्ता/कृष्णबाला गर्ग, दिल्ली	11,652	30.	अनिल मित्तल, बीसलपुर	5,100
9.	राघव वर्मा, दिल्ली	11,000	31.	विपिन कुमार पाण्डेय, बीसलपुर	5,100
10.	दिनेश बहल, दिल्ली	11,000	32.	सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5,100
11.	अरविन्द कुमार गुप्ता, फरीदाबाद	11,000	33.	सूरज भान सक्सेना, कानपुर	5,100
12.	रीता शर्मा, कानपुर	11,000	34.	युगेन्दर ऋषि सुपुत्र लेफ्टिनेंट यशपाल ऋषि, दिल्ली	5,100
13.	चेतन भण्डारी, दिल्ली	11,000			
14.	इज्जत राय उप्पल, लुधियाना	11,000	35.	अजय अग्रवाल, बरेली	5,100
15.	सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	11,000	36.	सुनील कान्त अग्रवाल, पीलीभीत	5,100
16.	सचिन अग्रवाल, फरीदाबाद	11,000	37.	चन्द्रभान गुप्ता, दिल्ली	5,100
17.	शिवम अग्रवाल, फरीदाबाद	11,000	38.	अजय अग्रवाल, बरेली	5,100
18.	सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	11,000	39.	सुनील कान्त अग्रवाल, पीलीभीत	5,100
19.	गोल्डन चोकलेट प्रा. लि., दिल्ली	11,000	40.	सुनील कान्त अग्रवाल, पीलीभीत	5,100
20.	आरम्भ कोचर, दिल्ली	10,000	41.	अंकित अग्रवाल	5100
21.	दीतेश मोहन, गुरुग्राम	10,000	42.	दक्ष अरोड़ा, दिल्ली	5,001

43. सुरेन्द्र व राधा अग्रवाल, बीसलपुर	5,000	75. अभय सिंह, रायबरेली	2,500
44. हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	5,000	76. सुरेन्द्र अग्रवाल, बीसलपुर	2,500
45. हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	5,000	77. शशि अग्रवाल, साधना धाम	2,500
46. रविशंकर बाजपेयी, कानपुर	5,000	78. चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	2,500
47. सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5,000	79. मीरा, नोएडा	2,500
48. विजय गुलाटी, दिल्ली	5,000	80. ऑनलाइन	2,400
49. आशा गुलाटी, दिल्ली	5,000	81. संजय अग्रवाल, फरीदाबाद	2,200
50. अजय सेठ, नोएडा	5,000	82. सूरज भान सक्सेना, कानपुर	2,200
51. रेवा भांबरी, नोएडा	5,000	83. सूरज भान सक्सेना, कानपुर	2,200
52. हर्ष कपूर, गुरुग्राम	5,000	84. आशुतोष त्रिपाठी, कानपुर	2,100
53. दिव्या नन्दराजोग, दिल्ली	5,000	85. अंशुल अग्रवाल, बरेली	2,100
54. सतेन्द्र नेगी, हरिद्वार	5,000	86. सुधा आहूजा/समृद्धि, गुरुग्राम	2,100
55. सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5,000	87. कुसुम तनेजा, दिल्ली	2,100
56. दिव्या अलोक मेनरिश	5,000	88. गिरीश मोहन, कनखल	2,100
57. गोविन्द राम पाण्डेय, कानपुर	4,100	89. सुशील अग्रवाल, बीसलपुर	2,100
58. हरि कालरा, कानपुर	4,100	90. योगेश कुमार, बीसलपुर	2,100
59. प्रेम चन्द श्री राम वर्मा, दिल्ली	4,100	91. दीपक त्रिपाठी, दिल्ली	2,100
60. आविष्कार मल्होत्रा, गुरुग्राम	3,600	92. संजय अग्रवाल, फरीदाबाद	2,100
61. अभय सिंह, रायबरेली	3,500	93. अंबरीश तिवारी, कानपुर	2,100
62. विष्णु अग्रवाल, बरेली	3,500	94. संजय अग्रवाल, फरीदाबाद	2,100
63. आर.सी. गुप्ता/उषा गुप्ता, गाजियाबाद	3,101	95. अनिरुद्ध अग्रवाल, बीसलपुर	2,100
64. एस.डी. सेठ, दिल्ली	3,100	96. अनुज अग्रवाल, दिल्ली	2,100
65. दीपक अग्रवाल, बीसलपुर	3,100	97. डॉ. आकांक्षा अग्रवाल, नोएडा	2,100
66. सात्विक पारिख, दिल्ली	3,100	98. रवि कान्त भण्डारी, लुधियाना	2,100
67. मनीषा रूबरा, कानपुर	3,100	99. अनुषा अग्निहोत्री, रुड़की	2,100
68. सात्विक आर. प्रकाश, दिल्ली	3,100	100. ऑनलाइन	2,100
69. सनराइज ट्रेडर्स/एस.एन. कालरा, कानपुर	3,100	101. ऑनलाइन	2,100
70. विष्णु अग्रवाल, बरेली	3,100	102. विवेक गुप्ता/चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	2,100
71. केवल कृष्ण, दिल्ली	3,100	103. विवेक गुप्ता/चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	2,100
72. सोनी फैमिली (प्रिया सोनी), चण्डीगढ़	3,000	104. अनीश कुमार काक, ऑनलाइन	2,100
73. सुनील अग्रवाल, पीलीभीत	2,500	105. ऑनलाइन	2,100
74. मनोज कुमार गुप्ता, बीसलपुर	2,500	106. कृष्ण एस. राठौर	2,001

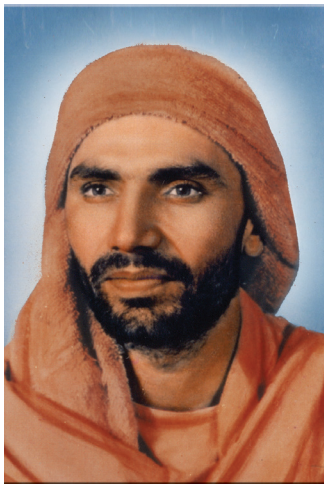

श्री गुरु पूर्णिमा साधना शिविर

(9 से 14 जुलाई 2022 तक)

शिविर स्थान:

स्वामी रामानन्द साधना धाम, संन्यास रोड, कनखल (उत्तराखण्ड)

9 जुलाई 2022 को गुरु पूर्णिमा का शिविर आरम्भ होगा।

11 जुलाई की सन्ध्या से 13 जुलाई की प्रात: तक 36 घण्टे का अखण्ड जाप होगा। 13 जुलाई को गुरु पूर्णिमा हर्षोल्लास के साथ मनाई जायेगी।

साधना परिवार की कार्यकारिणी की बैठक 11 जुलाई 2022 को प्रात: 10:30 बजे धाम के कार्यालय में होगी।

साधना-शिविर में भाग लेने वाले साधक कृपया अपने आने की सूचना 15 दिन पूर्व मैनेजर साधना-धाम को टेलीफोन या पत्र द्वारा अवश्य देने का कष्ट करें।

श्रीमद्भागवत कथा

(15 से 22 जुलाई 2022)

कथा-वाचक - बाल व्यास पण्डित ब्रह्मरात हरितोष (एकलव्य)

कथा स्थल - स्वामी रामानन्द साधना धाम, संन्यास रोड, कनखल, हरिद्वार

समय - अपराह्न 2:30 से 6:30 बजे तक।

आप सभी से अनुरोध है कि श्रीमद्भागवत कथा का रसास्वादन करके अपना जीवन सफल बनायें।

रामायण पाठ

(23 से 31 जुलाई 2022)

वाचक - भागवताचार्य एवं गीतामर्मज्ञ श्री सुशील जी मिश्र

कथा स्थल - स्वामी रामानन्द साधना धाम, संन्यास रोड, कनखल, हरिद्वार

समय - प्रात: 9 बजे से 11 बजे तक / अपराह्न 3 बजे से 5 बजे तक।

आप सभी से अनुरोध है कि रामायण पाठ का रसास्वादन करके अपना जीवन सफल बनायें।

बाल-साधना-शिविर-2022

शिविर स्थानः स्वामी रामानन्द साधना-धाम,
संन्यास रोड, कनखल, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

समय : 2 जून से 7 जून 2022 प्रातः तक

कुछ वर्षों से ग्रीष्मावकाश में बाल-साधना शिविर का आयोजन सफलतापूर्वक किया जा रहा है। इस शिविर का मुख्य उद्देश्य है बालकों का आध्यात्मिक, चारित्रिक एवं शारीरिक विकास करना। पूज्य गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी की साधना पद्धति की सरल ढंग से जानकारी दी जायेगी एवं व्यावहारिक साधना के अन्तर्गत व्यावहारिक ज्ञान दिया जायेगा। शिविर में जाप का आवाहन, गीता पाठ, भजन एवं गोष्ठी का संचालन बालकों के द्वारा ही होगा अतः तैयारी करके आयें। प्रातः भ्रमण, खेल व योग के कार्यक्रम भी होंगे।

आवश्यक सामग्री : अपने पहनने के आवश्यक कपड़े, तौलिया, टूथपेस्ट व ब्रश, कंघा, साबुन, भ्रमण के लिए जूते, कापी, पैन एवं पेन्सिल।

बिस्तर एवं बर्तनों की व्यवस्था साधना-धाम की ओर से होगी।
कृपया अपने आने की सूचना 15 दिन पूर्व साधना-धाम में व्यवस्थापक महोदय को पत्र या फोन द्वारा अवश्य दें। (फोन नं. 01334-240058, मोबाईलः 09872574514, 08273494285)

प्रतियोगितायें

बच्चों को तीन ग्रुपों में बाँटा जाएगा।

1. पहला ग्रुप 7 वर्ष से 10 वर्ष तक के बच्चे - शिक्षाप्रद कहानियाँ।
2. दूसरा ग्रुप 11 वर्ष से 14 वर्ष तक के बच्चे - सन्तों की कहानियाँ एवं संस्मरण।
3. तीसरा ग्रुप 15 वर्ष से 20 वर्ष के बालक व बालिकायें - दिये गये विषय पर सामूहिक चर्चा (Group Discussion)।

श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य

1.	अध्यात्म विकास	इन पुस्तकों में श्री स्वामी जी ने अपनी विकासवादी नवीनतम साधना पद्धति का विस्तार से वर्णन किया है।
2.	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)	
3.	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)	
4.	Evolutionary Outlook on Life	
5.	Evolutionary Spiritualism	
6.	जीवन-रहस्य तथा उत्पादिनी शक्ति	काम शक्ति तथा अध्यात्म विषय पर स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
7.	गीता विमर्श	श्रीमद्भगवद्गीता के प्रथम 7 अध्यायों की स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
8.	व्यावहारिक साधना	पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखित तीन लेखों – (1) साधकों के लिये, (2) दम्पत्ति के लिये, (3) माता-पिता के प्रति का संकलन
9.	कैलाश-दर्शन	पूज्य स्वामी जी ने कुछ साधकों के साथ कैलाश-पर्वत की यात्रा व परिक्रमा की थी। उस यात्रा का एवं उनकी आत्मानुभूति का विशद् वर्णन
10.	गीतोपनिषद	श्रीमद्भगवद्गीता के आठ से अठारह अध्याय तक स्वर्गीय श्री के.सी. नैयर जी द्वारा व्याख्या
11.	हमारी साधना	श्री पुरुषोत्तम भटनागर द्वारा सम्पादित
12.	हमारी उपासना	
13.	साधना और व्यवहार	
14.	अशान्ति में	
15.	मेरे विचार	
16.	As I Understand	
17.	My Pilgrimage to Kailsah	
18.	Sex and Spirituality	जीवन-रहस्य (प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित पुस्तकें)
19.	Our Worship	हमारी साधना
20.	Our Spiritual Sadhana Part-I	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)
21.	Our Spiritual Sadhana Part-II	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)
22.	स्वामी रामानन्द-एक आध्यात्मिक यात्रा	स्वस्पष्ट प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना
23.	पत्र-पीयूष	कु. शीला गौहरी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के पत्रों का संकलन
24.	स्वामी रामानन्द-चरित सुधा	स्व. डा. कविराज नरेन्द्र कुमार एवम् वैद्य श्री सत्यदेव
25.	स्वामी रामानन्द-वचनामृत	श्री जगदीश प्रसाद द्विवेदी द्वारा गुरुदेव की पुस्तकों से संकलन
26.	मेरी दक्षिण भारत-यात्रा	पूज्य सुमित्रा माँ जी द्वारा दक्षिण भारत यात्रा का रोचक वर्णन
27.	पत्तियाँ और फूल	भजन, पद, कीर्तन, आरती आदि का संकलन
28.	दैनिक आवाहन विधि	स्वामी जी की साधना प्रणाली पर आधारित - श्रीमती महेश प्रकाश
29.	Letters to Seekers	कु. शीला गौहरी एवं श्री विजय भण्डारी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के अंग्रेजी पत्रों का संकलन
30.	आत्मा की ओर	
31.	जीवन विकास - एक दृष्टि	Evolutionary Outlook on Life का हिन्दी अनुवाद
32.	विकासात्मक अध्यात्म	Evolutionary Spiritualism का हिन्दी अनुवाद
33.	गुरु के प्रति निष्ठा	तेजेन्द्र प्रताप सिंह
34.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 1)	अनाम साधिका
35.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 2)	
36.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 3)	
37.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 4)	
38.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 5)	
39.	श्रीराम भजन माला	श्री सूर्य प्रसाद शुक्ल 'राम सरन'
40.	माँ का भाव भरा प्रसाद गुरु का दिव्य प्रसाद	मीरा गुप्ता
41.	पत्र-पीयूष सार	
42.	गीता पाठ	
43.	गृहस्थ और साधना	
44.	प्रभु दर्शन	
45.	प्रभु प्रसाद मिले तो	

साधना शिविर में आरती करती हुई साधिकाएँ

दिगोली धाम में
श्री हरपाल सिंह
राजपूत द्वारा किए गए
भण्डारे में छात्राएँ प्रसाद
ग्रहण करती हुईं

साधना शिविर में योगाभ्यास कराते श्री सुभाष जी ओवर